शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 10 अंक : 1 1 अगस्त, 2017

(श्रावण-भाद्रपद, विक्रम संवत् 2074)

संस्थापक संरक्षक
स्व. मुकुन्द राव कुलकर्णी के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/– वार्षिक शुल्क 200/–
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में
प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का
सहमत होना आवश्यक नहीं है।

रचनात्मकता और दुराग्रह ❑ डॉ. रेखा यादव

यथार्थ के स्तर पर जो सामान्य प्रेक्षण है उसे स्वीकारना चाहिए अनावश्यक नवाचार लागू करना व्यवस्था को नुकसान पहुँचाता है। तकनीक के प्रयोग ने मनुष्य की सृजनात्मक क्षमताओं को समाप्त प्रायः कर दिया है। सृजन का आनन्द रचनात्मकता का उत्प्रेरक है इसलिए संसाधनों के प्रति मितव्ययता, सदुपयोग, पुनः प्रयोग का भाव विकसित होना चाहिए। सृजन का आनन्द स्वयं के सृजन से ही नहीं जुड़ा है। प्रकति के, ईश्वर के सृजन को देखने व अनुभव करने की दृष्टि भी रचनात्मकता है, परन्तु रचनात्मकता के परिणाम प्रकट करने से पूर्व उसके प्रयोजन, परिणाम, बौद्धिक एवं तार्किक संगति और सार्थकता को जानना समझना भी आवश्यक है। शिक्षा इसी हेतु से है ।

अनुक्रम

4. भारतीय शिक्षा और रचनात्मकता – सन्तोष पाण्डेय
6. फैक्ट्री नहीं, जैविक कृषि जैसे हों विद्यालय – विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
8. भारतीय शिक्षा दर्शन : समग्र विकास का वाहक – प्रो. मधुर मोहन रंगा
13. संस्कारित शिक्षा- रचनात्मक दृष्टि – बजरंग प्रसाद मजेजी
15. शिक्षा में रचनात्मकता की आवश्यकता – डॉ. बुद्धमति यादव
17. शिक्षा की सार्थकता : रचनात्मकता – डॉ. ओम प्रकाश पारीक
19. रचनात्मकता और युवा भारत – डॉ. ऋतु सारस्वत
22. आधुनिक शिक्षण में रचनात्मकता जरूरी – डॉ. रेखा भट्ट
31. Innovative Institution or Pathetic... – Prof. A. K. Gupta
33. 15 अगस्त और शिक्षा की स्वतन्त्रता – दीप्ति चतुर्वेदी
35. क्रान्तिकारी विचारक महर्षि अरविन्द – विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
37. भारत के शिक्षा तंत्र में घोर अव्यवस्था – डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
40. गतिविधि

Education, Humanities and Creativity

❑ **Dr. TS Girishkumar**

The point is, "creativity cannot be created artificially". Creativity has to be spontaneous, genuine and authentic. Training shall only polish them, but training shall not create the requisite 'Sthaibhava' as directed in the Upanishads. Sthaibhava is the permanent disposition of the mind: perhaps it may be in born. We come to the point that creativity cannot be taught, a point that one has to accept. Poetries are simple words after all; but we have seen how magical those very words which we already knew become to create another world amazing, when it comes to minds like those of Kalidasa.

28

भारतीय शिक्षा और रचनात्मकता

❑ सन्तोष पाण्डेय

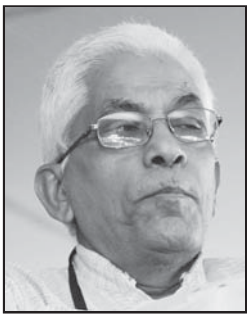

शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन के लिये आवश्यक है कि शिक्षा में रचनात्मक प्रवृत्तियों को प्रेरित करने वाली गतिविधियों को अधिक महत्त्व दिया जाय। प्राथमिक स्तर की शिक्षा में बस्ते को पूर्णत: प्रतिबंधित कर बच्चे को मनोनुकूल गतिविधियों में संलग्न किया जाय। नैतिक गुणों से अनुप्राणित करने वाली कहानियों, प्रहसनों व सजीव उदाहरणों द्वारा उनकी रुचि विद्यालय में बढ़ाने के प्रयास होने चाहिये। सक्रिय गतिविधियों द्वारा उनको अक्षर ज्ञान कराने व साधारण गणितीय गतिविधियाँ सम्पन्न कराई जाये। स्कूल की प्राथमिक स्तर तक की गतिविधियाँ इस प्रकार संयोजित की जाये, जिनसे संस्कार निर्माण हो, बच्चा उचित अनुचित का अन्तर समझे। उच्च प्राथमिक व माध्यमिक स्तर की शिक्षा से ही पाठ्यक्रम व पाठ्यचर्या, क्लासरूम टीचिंग, जो गतिविधि आधारित हो के प्रेरित किया जाय।

संपादकीय

भारत में शिक्षा की अत्यन्त समृद्ध व गौरवशाली परंपरा रही है। ज्ञान के अनवरत विकास से लाभान्वित होकर यह निरंतर परिवर्तनशील बनी रही। इसकी रचनात्मक प्रवृत्तियों को पोषित व प्रेरित करने की शक्ति से लाभान्वित हो देश व समाज भी उन्नत परिवर्तनशील, साधन सम्पन्न व शक्तिशाली राष्ट्र बन सका। सदियों की दासता ने इसकी रचनात्मकता में व्यवधान डाले, परन्तु गति को मन्द करने के अतिरिक्त कोई क्षय नहीं हो सका। परन्तु अंग्रेजी शासकों ने शिक्षा व्यवस्था में मैकालयी परिवर्तन कर शिक्षा की दिशा ही बदल दी। स्वाभिमान, स्वावलंबन, आत्मगौरव, राष्ट्रगौरव के भावों व संस्कारों से व्यक्ति को परिपूर्ण करने वाली एवं सदैव परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक अभिमत को सृजित कर रचनात्मकता को प्रेरित करने वाली शिक्षा के स्थान पर परावलंबी, चाकरी को अन्तिम एवं परमलक्ष्य मानने वाली शिक्षा ने रचनात्मकता को लगभग समाप्त कर दिया है। स्वतंत्रता के सात दशकों में अनेक प्रयास करने के बाद भी शिक्षा में गत्यात्मकता सृजित नहीं हो सकी है। सदियों की दासता एवं आंग्ल शिक्षा ने भारतीय समाज व आर्थिक व्यवस्था के ताने-बाने को इतना क्षतिग्रस्त किया है कि इसमें प्रारंभण (initiative), नवाचारों व नवोन्मेषों की परंपरा समाप्त सी हो गई। भारतीय शिक्षा स्थैतिक स्थिति को प्राप्त हो चुकी है। इसके पुन: सशक्तीकरण करने व रचनात्मकता को प्रेरित कर व सृजनशील बनाने हेतु पुन: भारतीय संस्कृति की जड़ों की ओर लौटना होगा।

रचनात्मकता व सृजनशीलता व्यक्तिगत होने के साथ-साथ समाज व राष्ट्र से संबंधित होती है। जब व्यक्ति में अन्तर्निहित संभावनाओं को विकसित कर उसे पूर्ण मानव बनाने का प्रयास किया जाता है तो रचनात्मकता, व्यक्तिगत होती है, परन्तु व्यक्ति में निहित रचनात्मकता का उपयोग समाज व देश के हित में हो तो वह सामाजिक रचनात्मकता होती है। रचनात्मकता व्यक्ति व समाज को सोच विचार व आचरण में प्रकट होती है। सामाजिक सांस्कृतिक मूल्य व उनकी अनुपालन संस्कार के निर्माण द्वारा आदर्शों, उचित अनुचित का निर्णय, परिहरण योग्य व्यवहारों को त्यागने आदि के माध्यम से रचनात्मकता की प्रवृत्ति बलवती होती है। व्यवहार की इन प्रवृत्तियों को शिक्षा बल प्रदान करती है। शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति आदर्शों व लक्ष्यों, करणीय व अकरणीय, उचित-अनुचित, कल्याणकारी व मानव हितकारी व्यवहार को समझता व अपनाता है। रचनात्मकता से सृजनशीलता आती है। इसके दायरे में ही व्यक्ति मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले विचारों को साकार कर सृजनशीलता की ओर अग्रसर होता है। कवि, कलाकार, विभिन्न विधा विशेषज्ञ, विज्ञानी समाज विज्ञानी व दार्शनिक मानव सुलभ जिज्ञासा को विचारों में परिवर्तित कर उसे व्यावहारिक बनाने जो प्रयास करते हैं, यही रचनात्मकता है, सृजनशीलता है। इसी से देश, समाज व व्यक्ति प्रगति करता है। प्रश्न यही है कि कैसे ऐसी सशक्त शिक्षा व्यवस्था बनायी जाय, जो व्यक्ति व समाज में नये विचारों, संकल्पनाओं को साकार करने के प्रयासों को जीवन्त बना सके।

भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था इस कार्य संपादन में दक्ष थी। परन्तु वर्तमान की शिक्षा इस महान् कार्य को संपन्न करने से विमुख हो चुकी है। मात्र नौकरी पाने हेतु ही शिक्षा प्राप्त करने के सर्वव्याप्त ध्येय ने शिक्षा में रचनात्मकता को समाप्त प्राय: ही नहीं किया है, वरन् इस असफलता ने समाज व व्यक्ति में नैराश्य भाव भर दिया है। शिक्षा आज इतनी रूढ हो चुकी है कि इसमें कितने ही प्रयास किये जाय, वे फलीभूत नहीं हो पाते हैं। शिक्षा रोजगारोन्मुखी भी नहीं हो पा रही है। सभी अनुभव करते हैं कि आज शिक्षा की स्थिति संतोषजनक नहीं है। आज की शिक्षा एक बड़े उद्योग व व्यवसाय में बदल चुकी है। अच्छी शिक्षा का अभिप्राय है ऊँची फीस वाले विद्यालय व महाविद्यालय या विश्वविद्यालय, जो अपने उत्पाद की गुणवत्ता व सृजनशीलता के स्थान पर वैयक्तिक सफलता व स्वहित पोषण के केन्द्र के रूप में मान्य हैं और जहाँ सभी प्रवेश के इच्छुक हैं। शिक्षा में रचनात्मकता व सकारात्मकता बढ़ाने के लिये अपेक्षित है कि नये-

नये विचारों को प्रयोगों में बदलने व उन्हें व्यवहार योग्य बनाने की सुविधा प्राप्त हो। विचारों का उत्पन्न होना ही सृजन है। इन्हें समाज के उपयोग योग्य बनाने के लिये प्रयोगों की सुविधा प्रथम आवश्यकता है। परन्तु वृहत उत्पाद व्यवस्था की सफलता अनुकृति, अनुपालन व एक समान उत्पाद बनाने में निहित है। इसके कुछ मान्य मानक अवयव (standard parts) होते हैं जो सभी में समायोजित हो सकते हैं।

आज की भारतीय शिक्षा एक लाभदायक विशाल उद्योग ही नहीं वरन प्रमाणीकरण (standardisation) के पैटर्न अपनाने वाली वृहद उत्पाद व्यवस्था है। आज सर्वत्र समान पाठ्यक्रम, समान पाठ्यपुस्तकें, समान व एक रूप मूल्यांकन व्यवस्था, एक समान गणवेश आदि के कारण शिक्षा एक वृहत उत्पाद वाली व्यवस्था बन गई है। इस व्यवस्था में वैयक्तिक क्षमताओं और संभावनाओं के अनुकूल कुछ भी नया करने की सुविधा उपलब्ध नहीं है। नवाचार व नवोन्मेषों की कोई गुंजाइश नहीं है। छात्रों को निश्चित् पैटर्न के अन्तर्गत ही अपनी सफलता खोजनी होती है। नया करने की चाह या नये विचारों को कार्य रूप में बदलने की प्रवृत्ति कुंठित हो जाती है। आउट ऑफ बॉक्स सोचने वाले बिलगेट्स या स्टीव जॉब्स को शिक्षा की मुख्य धारा से हटकर ही नये विचारों को साकार करने में सफलता मिलती है। मुख्य धारा की शिक्षा में सभी केवल अंकों को शत प्रतिशत पहुँचाने की दमघोंटू प्रतियोगिता है। अच्छे से अच्छे अंक प्राप्त करने वाले भी इच्छित ज्ञान की शाखा में प्रवेश पाने में असफल रहने पर अवसाद ग्रस्त हो रहे हैं। यह एक परिदृश्य है, तो दूसरी ओर घोर परिश्रम के पश्चात् उच्च स्तरीय कागजी डिग्री प्राप्त करने के बाद भी रोजगार या कहें नौकरी वह भी इच्छित नौकरी उपलब्ध नहीं है कुछ तो नौकरी के अवसर बहुत कम हैं जो बहुत कुछ उनकी कागजी डिग्री वांछित नौकरी की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को पूर्ण नहीं करती हैं। यह मानवीय संसाधनों व देश की पूँजी का सर्वाधिक दुरुपयोग है। आज भारत विश्व में सर्वाधिक युवा मानवीय संसाधनों वाला देश है। परन्तु यही युवाशक्ति या तो नैराश्य से ग्रस्त है, अथवा नकारात्मक प्रवृत्तियों की ओर अग्रसर है। युवाओं के हाथ में कम्प्यूटर के स्थान पर पत्थर या हथियार क्यों है, क्यों आज उच्च शिक्षा के कैम्पस अशांति व आन्दोलनों से ग्रस्त है। इन सभी का उत्तर केवल शिक्षा में रचनात्मकता, सृजनशीलता व सकारात्मक दृष्टिकोण का अभाव है। छात्र जीवन में युवा को अपनी स्वाभाविक वृत्तियों को विकसित करने का अवसर नहीं मिलता क्योंकि शिक्षा केन्द्रों में शैक्षणेत्तर प्रवृत्तियाँ, गतिविधियाँ समाप्त हो चुकी है। शिक्षा संस्थानों की भारी शक्ति व क्षमता का उपयोग केवल परीक्षा परिणाम को श्रेष्ठ बनाने में ही आँकी जाती है। शिक्षा संस्थानों में संस्कार निर्माण, उच्च व श्रेष्ठ जीवन मूल्यों में छात्रों को दीक्षित करने की न तो कोई योजना है और न ही कोई इच्छाशक्ति। ऐसे वातावरण में शिक्षा का परिदृश्य तभी बदल सकता है, जब शिक्षा व्यवस्था, शैक्षिक प्रशासन और उनके दृष्टिकोण में आमूलचूल परिवर्तन किया जाय। यह सब दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति से ही संभव हो सकता है।

शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन के लिये आवश्यक है कि शिक्षा में रचनात्मक प्रवृत्तियों को प्रेरित करने वाली गतिविधियों को अधिक महत्त्व दिया जाय। प्राथमिक स्तर की शिक्षा में बस्ते को पूर्णत: प्रतिबंधित कर बच्चे को मनोनुकूल गतिविधियों में संलग्न किया जाय। नैतिक गुणों से अनुप्राणित करने वाली कहानियों, प्रहसनों व सजीव उदाहरणों द्वारा उनकी रुचि विद्यालय में बढ़ाने के प्रयास होने चाहिये। सक्रिय गतिविधियों द्वारा उनको अक्षर ज्ञान कराने व साधारण गणितीय गतिविधियाँ सम्पन्न कराई जाये। स्कूल की प्राथमिक स्तर तक की गतिविधियाँ इस प्रकार संयोजित की जाये, जिनसे संस्कार निर्माण हो, बच्चा उचित अनुचित का अन्तर समझे। उच्च प्राथमिक व माध्यमिक स्तर की शिक्षा से ही पाठ्यक्रम व पाठ्यचर्या, क्लासरूम टीचिंग, जो गतिविधि आधारित हो के प्रेरित किया जाय। शैक्षिणेत्तर प्रवृत्तियों यथा चित्रकला, नृत्य, स्थानीय संस्कृति से परिचय, खेलकूद इत्यादि को बढ़ावा दिया जाय। समस्त स्कूलों में संपन्न होने वाली प्रार्थना सभाओं में संस्कार निर्माण को प्रेरित करने वाली कार्यवाही में बदला जाय। नैतिक गुणों के विकास व जीवन को मानव सेवा में लगाने के उच्च नैतिक व आध्यात्मिक गुणों से युक्त धर्मगुरुओं, समाज सेवकों या अन्य प्रेरणा देने वाले व्यक्तियों को प्रवचन व संवाद स्कूली जीवन का अभिन्न अंग हो जाय तो सकारात्मकता को बलवती बनाया जा सकता है। श्रेष्ठ जीवन मूल्य जीने की प्रेरणा बच्चों में समाहित की जानी चाहिये।

उच्च शिक्षा के विकास या अवनति से देश का जीवन प्रत्यक्षत: प्रभावित होता है। प्राचीन काल में उच्च शिक्षा का स्तर ऊँचा होने से ही आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण व भौतिक समृद्धि से युक्त हो सका। आज भारत की सर्वाधिक गिरावट दृष्टिगोचर हो रही है। इसमें आमूल-चूल परिवर्तन समय की माँग है। उच्च शिक्षा आज कोई भी व्यावहारिक ज्ञान उपलब्ध नहीं कराती है। विज्ञान जैसे विषयों में प्रायोगिक परीक्षण, तकनीकी शिक्षा में इंटर्नशिप, व्यावसायिक शिक्षा व व्यावहारिक विज्ञानों में प्रयोग व इंटर्नशिप समय की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा को वित्तीय के अतिरिक्त सभी प्रकार की नियामकीय जकड़नों से युक्त करना होगा। उच्च शिक्षा संस्थानों को शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग करने की अनुमति होनी चाहिये। उच्च शिक्षण संस्थानों को एक समान पाठ्यक्रम व मूल्यांकन व्यवस्था से मुक्त करना होगा। सबसे बड़ी बात समस्त शिक्षकों को रचनात्मक व सकारात्मक दृष्टिकोण वाला बनाना होगा। छात्रों से निकट सम्पर्क व उससे छात्र के व्यक्तित्व पर पड़ने वाली अमिट छाप, रचनात्मक प्रवृत्ति को बढ़ाने सर्वाधिक योग दे सकती है। अब भी समय है सरकार को दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति का परिचय देते हुये शिक्षा में व्यापक परिवर्तन लाये जाने चाहिये। भविष्य में पीढ़ियाँ उनकी आभारी रहेगी। ❑

फैक्ट्री नहीं, जैविक कृषि जैसे हों विद्यालय

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

जिस देश में 'सा विद्या या विमुक्तये' की उक्ति दी गई है उसी देश में शिक्षा को परीक्षा की बेड़ियों से बाँध दिया गया। बात अन्तःकरण के विकास की की जाती है मगर व्यवहार बच्चे को फैक्ट्री उत्पाद में बदलने का किया जाता है। शिक्षा संस्थानों के विज्ञापन उसी तरह प्रकाशित होते हैं जैसे साबुन या जूते बनाने वालों के विज्ञापन होते हैं। बच्चे को हमारी फैक्ट्री में लाओ, हम उसे अपने साँचे में फिट कर उसे मँहगे उत्पाद में बदल देंगे। बच्चा बड़ी नौकरी पाकर आपको मालामाल कर देगा। यह कार्य भी ठीक तरह नहीं हो रहा। इन फैक्ट्रियों से निकला कुछ प्रतिशत माल ही बिक पाता है। शेष कूड़ा घोषित कर दिया जाता है। वस्तुतः मुक्त करने वाली शिक्षा बाँधने वाली बन गई है।

शिक्षा का प्रमुख कार्य व्यक्ति को रचनात्मक बनाना है मगर फैक्ट्री बने हमारे अधिकाँश विद्यालय बच्चों की मौलिकता को नष्ट कर उसे एक बिकाऊ उत्पाद में बदलने का प्रयास रहे हैं। एक सी वेशभूषा, एक सी पाठ्यपुस्तकें, एक सा समय विभाग चक्र तथा एक सी शिक्षण विधि के माध्यम से बच्चों को एक से प्रश्न पत्र को हल कर अधिक से अधिक अंक लाना सिखा रहे हैं। स्कूली औपचारिकताएँ पूरी करने में बच्चे व शिक्षक इतने व्यस्त हो जाते हैं कि बच्चे के स्वाभाविक विकास के लिए समय ही नहीं रहता। विद्वानों का मानना है कि स्कूलों को फैक्ट्री की तरह कार्य नहीं करके प्राकृतिक विकास करने वाले जैविक कृषि फार्म की तरह कार्य करना चाहिए। प्रौद्योगिकी आधारित इस युग में जैविक शिक्षा की बात भी की जाने लगी है।

शिक्षा का ध्येय और व्यवस्था

शिक्षा का ध्येय लिखित परीक्षा उत्तीर्ण करना नहीं होकर जीवन सफल बनाना होता है। वर्तमान स्कूली शिक्षा मेरिट में उच्च स्थान देकर जिनको अत्यधिक सफल घोषित करती है वे जीवन की परीक्षा में असफल होते देखे जा रहे हैं। शिक्षा व्यवस्था जिनको असफल बताकर बाहर कर देती है उनमें कई को अच्छी सफलता पाते देखा जा सकता है। फैक्ट्री की तरह चलने वाले विद्यालयों में व्यक्ति की नैसर्गिकता का कोई महत्व नहीं है। फैक्ट्री द्वारा निर्धारित साँचों में ढलना ही सबकी नियति है। अच्छे परीक्षा परिणाम के नाम पर रचनात्मकता का क्षरण हो रहा है। नकारात्मकता के प्रसार को नहीं समझकर अभिभावक उसे प्रशंसा भाव से स्वीकार कर रहे हैं।

सीखना बच्चे के मूड पर निर्भर करता है, वर्तमान शिक्षा तन्त्र में बच्चे के मूड का कोई महत्त्व नहीं है उसे तो व्यवस्था के अनुरूप ही चलना होता है। शिक्षक का कार्य परीक्षा की लाठी के बल पर रेवड़ हाँकने जैसा हो गया है। देश में शिक्षा के क्षेत्र में सरकार की ओर से विविध महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले प्रोफेसर यशपाल का मानना है कि शिक्षा में बच्चे के मूड को महत्त्व देना चाहिए। यदि किसी दिन किसी बच्चे की इच्छा पूरे समय रसायनशास्त्र पढ़ने की है तो उसे ऐसा करने देना चाहिए। व्यवस्था पसन्द शिक्षा प्रशासन में ऐसा संभव नहीं है, उसे घन्टी लगते ही रसायन छोड़ अन्य विषय पढ़ना ही होगा।

2005 की पाठ्यचर्या में बच्चे को किताबों और स्कूल की दुनिया से बाहर निकालने की बात कही गई थी मगर वह दस्तावेजों तक ही रह गई। व्यावहारिक तौर पर कुछ नहीं हुआ।

शिक्षा चावल पकाना नहीं है

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड हो या विश्वविद्यालय, शिक्षा के स्थान पर परीक्षा संचालक संस्थान बन कर रह गए हैं। ये संस्थान इतने सशक्त हो गए हैं कि सम्पूर्ण शिक्षा तन्त्र इनका गुलाम बन गया है। विद्यालयों व महाविद्यालयों का कार्य बोर्ड व विश्वविद्यालय द्वारा तैयार किए प्रश्न पत्रों को ठीक से हल कराना माने जाने लगा है। शिक्षा संस्थान व शिक्षकों के कार्य का मूल्यांकन परीक्षा परिणामों के आधार पर होता है। बच्चों की जाँच, चार चावल निकाल कर देख लेने जैसे की जाने लगी। यह नहीं देखा जाता कि चावलों की तरह सभी बच्चे एक समान नहीं होते। बच्चों की व्यक्तिगत भिन्नता का कोई महत्त्व नहीं रह गया है। कहने को शिक्षा को बाल केन्द्रित बताया जाता है मगर है वह प्रशासन केन्द्रित है। देश या प्रदेश की राजधानी में बैठे प्रशासन की सुविधा ही सर्वोपरि है। परीक्षा की शुचिता के नाम पर सम्पूर्ण तन्त्र इतना कठोर ढर्रे पर चलने लगा है कि नया करने के सभी प्रयास असफल रहे है। विवेकानंद व गाँधी को भुला दिया गया है मगर पूर्ण शक्ति के साथ मैकाले आज भी जीवित है।

जिस देश में 'सा विद्या या विमुक्तये' की उक्ति दी गई है उसी देश में शिक्षा को परीक्षा की बेड़ियों से बाँध दिया गया। बात अन्त:करण के विकास की की जाती है मगर व्यवहार बच्चे को फैक्ट्री उत्पाद में बदलने का किया जाता है। शिक्षा संस्थानों के विज्ञापन उसी तरह प्रकाशित होते हैं जैसे साबुन या जूते बनाने वालों के विज्ञापन होते हैं। बच्चे को हमारी फैक्ट्री में लाओ, हम उसे अपने साँचे में फिट कर उसे मँहगे उत्पाद में बदल देंगे। बच्चा बड़ी नौकरी पाकर आपको मालामाल कर देगा। यह कार्य भी ठीक तरह नहीं हो रहा। इन फैक्ट्रियों से निकला कुछ प्रतिशत माल ही बिक पाता है। शेष कूड़ा घोषित कर दिया जाता है। वस्तुत: मुक्त करने वाली शिक्षा बाँधने वाली बन गई है।

रचनात्मकता के विकास के लिये कार्य करने की स्वतंत्रता और अवसर की उपलब्धि के साथ सकारात्मक चुनौती का होना आवश्यक है। दबाव में रचनात्मकता सम्भव नहीं है। दबाव से भय पैदा होता है। भय की स्थिति में मनुष्य का मस्तिष्क् स्वाभाविक ढँग से काम नहीं करता है। मन विकृत हो जाता है। किसी नवाचार की हिम्मत तक नहीं जुटा पाता है। भयग्रस्त मन कभी भी सृजनशील नहीं हो सकता है। आज की शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यपुस्तक में निहित विषयवस्तु को रटना और रटाना ही ध्येय बन चुका है। शिक्षक की कोशिश रहती है कि निर्धारित समय में पाठ्यपुस्तक में संकलित विषयवस्तु को बच्चों तक पहुँचा दे। जो ऐसा करता है वह विद्यालय ही अच्छा कहलाता है। बच्चे को समझाया जाता है कि पुस्तक में जो लिखा उसे याद रखने में ही उसका भला है। पाठ्यपुस्तकों की साधना ही सफलता का पर्याय मान लिया गया है। पाठ्यपुस्तक से बाहर जाना बच्चे के लिए अपराध हो गया है। पाठ्यपुस्तक से बाहर का न तो बच्चा लिख सकता है और न पढ़ सकता है। अधिक अंक पाने का दबाव इतना अधिक है कि बच्चे के पास न खाने का समय है और न खेलने का। निश्चित समयावधि में पाठ्यक्रम पूरा कराने का दबाव आतंक की तरह हावी है। गाँधी जी ने लिखा है कि पाठ्यपुस्तकों से पढ़ाने वाला शिक्षक अपने छात्रों में मौलिकता विकसित नहीं कर सकता। शिक्षक स्वयं पाठ्यपुस्तकों का गुलाम हो जाता है। जब शिक्षक में ही मौलिकता नहीं होगी तो बच्चे में रचनात्मकता खोजना बेमानी है।

पुस्तक आधारित लिखित परीक्षा में अच्छे अंक दिलाने की प्रतियोगिता के चलते विज्ञान जैसे विषयों में भी प्रायोगिक कार्य बंद कर दिया गया है। प्रायोगिक परीक्षा भी लिखित परीक्षा में बदल गई है। कापी में लिखना ही पर्याप्त होता है प्रयोग करने की कोई आवश्यता नहीं। 90 से 100 प्रतिशत अंक मिल जाते हैं। भारत विज्ञान स्नातक उत्पन्न करने में अग्रणी होने पर भी आविष्कार में पीछे हैं। 1930 के बाद विज्ञान का कोई नोबल पुरस्कार भारत को नहीं मिला।

बेरोजगारी बढ़ रही है

राजस्थान सरकार का दावा है कि प्रत्येक ग्राम पंचायत में एक उच्च माध्यमिक विद्यालय खोल दिया गया है। आँकड़ों पर विश्वास करें तो भी रचानात्मकता का विकास नहीं है। सभी विद्यालयों में लगभग एक समान विषय आधी-अधूरी तैयारी से पढ़ाए जाते हैं। क्षेत्र की आवश्यकता या बच्चे की व्यक्तिगत अभिरुचि का इसमें कोई स्थान नहीं है। बच्चा अपने बल पर कुछ करने के योग्य नहीं बनता और पारिवारिक व्यवसाय से भी कट जाता है। वह नौकरी की तलाश करने वाली शिक्षित बेरोजगारों की भीड़ में खो जाता है। विटामिन की गोली खिलाने से कार्य चलने वाला नहीं है बड़ी शल्य क्रिया करनी होगी तभी दुष्चक्र से बाहर निकला जा सकेगा। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

भारतीय शिक्षा दर्शन : समग्र विकास का वाहक

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

बालक में सर्वप्रथम रुचि के विषय के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी, उसमें उसके पढ़ने व समझने की तीव्र आकाँक्षा होगी, इसी के द्वारा उसमें सृजनात्मक शक्ति का उदय होगा, जो उसके मस्तिष्क में सुषुप्तावस्था में होगी। सृजनात्मक शक्ति के विचार के साथ-साथ, विचारों का प्रवाह व उदय होगा, इसी के आधार पर तर्क शक्ति का विकास होगा, यही तर्क शक्ति परिष्कृत व परिमार्जित होकर नवाचारों (Innovation) को जन्म देगी। लगातार नवाचारों के विकास व प्रवाह के कारण स्मरण शक्ति पूर्णता की ओर अग्रसर होगी। जब सभी विधाओं से अर्जित ज्ञान का संचार होगा, तभी समष्टि का विकास व सम्वर्द्धन होगा। यही निष्काम कर्म शिक्षा दर्शन ही रचनात्मक शिक्षा का वाहक है।

शिक्षा व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व विश्व के कल्याण का मूल मंत्र है क्योंकि इसी में व्यष्टि व समष्टि की उन्नति निहित है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा व्यक्ति की सुषुप्तावस्था में उपस्थित अन्तर्निहित ज्ञान का प्रकटीकरण है। अर्थात् मानव के भीतर निहित पूर्णता का विकास करना है। यही वास्तव में रचनात्मक शिक्षा है क्योंकि जब बालक किसी पूर्णता की ओर अग्रसर होगा, तभी वह पूर्णता को प्राप्त करेगा, जैसे कोई बालक कला, विज्ञान, विधि, वानिकी या अन्य विषयों के प्रति संकेतांकों के माध्यम से अपनी रुचि व्यक्त करता है। यदि प्रारंभिक अवस्था में उसके संकेतों व मनोविज्ञान का ज्ञान प्राप्त कर उसे उसी दिशा में पूर्णता की ओर ले जाना ही रचनात्मक शिक्षा है। जिन बालकों के बाल्यकाल में शिक्षक या अभिभावक उनके अभिरुचि के आशय को समझ कर उसे उसी दिशा में प्रेरणा प्रदान करते हैं वही वास्तव में रचनात्मक शिक्षा का उद्देश्य है। बालक में सर्वप्रथम रुचि के विषय के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी, उसमें उसके पढ़ने व समझने की तीव्र आकाँक्षा होगी, इसी के द्वारा उसमें सृजनात्मक शक्ति का उदय होगा, जो उसके मस्तिष्क में सुषुप्तावस्था में होगी। सृजनात्मक शक्ति के विचार के साथ-साथ, विचारों का प्रवाह व उदय होगा, इसी के आधार पर तर्क शक्ति का विकास होगा, यही तर्क शक्ति परिष्कृत व परिमार्जित होकर नवाचारों (Innovation) को जन्म देगी। लगातार नवाचारों के विकास व प्रवाह के कारण स्मरण शक्ति पूर्णता की ओर अग्रसर होगी। जब सभी विधाओं से अर्जित ज्ञान का संचार होगा, तभी समष्टि का विकास व सम्वर्द्धन होगा। यही निष्काम कर्म शिक्षा दर्शन ही रचनात्मक शिक्षा का वाहक है। प्राचीन काल में विद्यार्थी गुरुकुल में विद्या अध्ययन करने जाते थे, उनके मन में ज्ञानार्थ प्रवेश व सेवार्थ प्रस्थान को भावना होती थी। शिक्षा ग्रहण करने के बाद दीक्षांत समारोह का आयोजन किया जाता था उसके गुरु, शिक्षार्थी को आदेश देते थे कि जिस शिक्षा का गुरु-आश्रम में अध्ययन किया है उसमें दीक्षित होकर सभी विद्याओं का अनुप्रयोग मानव कल्याण में उपयोग करो, यही

सही दीक्षा व रचनात्मक शिक्षा है। जब इस प्रकार का भाव लेकर बालक वास्तविक जीवन धरातल में प्रवेश करता है। तब उसमें समग्र कल्याण का भाव रहता है, परंतु यह भाव कालान्तर में परिवर्तित होते पर्यावरण के कारण प्रभावित होने लगता है व आन्तरिक प्रदूषण के कारण उसका जीवन व जीवन शैली प्रभावित होती है। श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार रचनात्मक व सार्थक शिक्षा दर्शन वह है जिसके अंतर्गत, अर्जित किया हुआ ज्ञान जैसे-चिकित्सा, कृषि, अभियांत्रिकी, विज्ञान, तकनीकी व मानविकी विषय का वास्तविक व व्यावहारिक उपयोग हो यानि ज्ञान या विसरण हो। जैसे प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों का वास्तविक धरातल पर प्रयोग किया जाय जैसे 'Laboratorey to field and field to Laboratorey' इसी प्रकार उभयमार्गीय व्यवहार व संवाद के कारण ही अर्जित ज्ञान की उपादेयता प्रतिपादित होकर प्रत्येक क्षेत्र में विकास के नये कीर्तिमान स्थापित होंगे। अर्थात् Learning by doing व बार-बार अधिगम व उसका अनवरत सार्थक उपयोग। जिस प्रकार इजराइल में प्राकृतिक जल की कमी है। उनके कृषि वैज्ञानिकों ने पौधों में सेन्सर (Sensor) लगा रखे हैं, ताकि उन्हें आवश्यकतानुसार ही पानी प्रदान किया जाये, इससे जल संरक्षण व जल की सार्थक उपयोगिता सिद्ध होती है। इस प्रकार के प्रयोजनों से देशानुकूल व समयानुकूल रूपान्तरण व परिवर्तन सार्थक शिक्षा में किया जा सकता है। परंतु आश्चर्य व दु:ख तब होता है जब तिरुवन्तपुरम का छात्र बारहवीं में 80 प्रतिशत अंक प्राप्त करने के बाद कहता है कि मेरी पसंद के महाविद्यालय में प्रवेश नहीं मिलने पर मैं पढ़ाई नहीं खेती करूँगा। (भास्कर 18 जुलाई 2017) यह हमारे शिक्षा दर्शन पर प्रहार है। यदि उस बालक को पसंद के महाविद्यालय में प्रवेश मिलता, वह उच्च शिक्षा ग्रहण करता व उसके मन में जो कृषि व्यवसाय को अपनाने की सोच है उसे वह अभिनव ज्ञान, जो उसे उच्च शिक्षा में प्राप्त होता, उसका वह उपयोग करता, यही सार्थक शिक्षा की उपादेयता है। आज भी हमारी शिक्षा प्रणाली व पद्धति पर पश्चिम के सांस्कृतिक साम्राज्यवाद, उपनिवेशवादी प्रभाव, परभाषा प्रभाव, परावलम्बी निर्भरता व नव-उपनिवेशवाद, हमारी शिक्षा में छद्म रूप से प्रवेश कर रहे हैं। यह वास्तव में उपनिवेशिक शैक्षिक कूटनीति है, इससे निजात पाना होगा तभी भारतीय संस्कृति के अनुरूप व आधुनिकता की ओर बढ़ते समुदाय की आवश्यकताओं, आकाँक्षाओं व परिस्थिति सापेक्ष शिक्षा दर्शन का विकास करना होगा। जिसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय विकास, भ्रातृत्व एकता, सामाजिक न्याय, सामाजिक परिवर्तन समावेशी सोच व शिक्षा व उन्नति के साथ-साथ दीर्घकालिक वृद्धि, रोजगारपरकता, गुणवत्ता आदि उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु भगीरथ प्रयास करना होगा। यद्यपि केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न योजनाएँ प्रचलित हैं। परंतु उनकी शत-प्रतिशत क्रियान्विति होनी चाहिये। शिक्षा विकासीय प्राथमिकताओं को भी केन्द्र बिन्दु माने यह तभी संभव होगा जब सुशासन व उचित वित्त प्रबंधन होगा। यही आधार या शिक्षा की नींव है, जिस पर पाठ्यक्रम, संकाय, शोध, सहभागिता व आधारभूत संरचना अवलम्बित है। यही शिक्षा का वास्तुशास्त्र है। (Architecture of Education) संयुक्त राष्ट्र संघ के सहस्त्राब्दी विकास उद्देश्यों (MDGs) को 2015 तक पूरा करने के पश्चात 2015-2030 तक नवीन दीर्घकालिक Sustainable Developments Goals, SDGs विकास उद्देश्यों को पूरा करने का प्रस्ताव है, इन सब के मूल में शिक्षा दर्शन ही है। विश्व विकास रिपोर्ट World Developments Report ने शिक्षा में सामाजिक जिम्मेदारी को निभाने के लिए शिक्षा व्यवस्था में विकेन्द्रीकरण का सुझाव दिया था हमारे देश में भी उसके अनुसार शिक्षा व्यवस्था है परंतु मूल विषय वही शिक्षा दर्शन का आ जाता है जो भारतीय परिप्रेक्ष्य में है। विद्यार्थी हमारा आराध्य है व हमारी शिक्षा नीति भी विद्यार्थी केन्द्रित है। विद्यार्थी इस धरा पर निर्विकल्प भाव से पदार्पण करता है उसमें असीमित क्षमता है, अतुलित गुण सम्पदा का भण्डार संचित है, प्रसुप्त प्रतिभा है, अत: शिक्षण संस्थाओं के चतुर्दिक फैले शैक्षिक वातावरण से उसे भारतीय शिक्षा दर्शन के अनुसार दीक्षित कर संस्कारों का सृजन, उसके अन्तर्निहित गुणों का संवर्द्धन करना चाहिये तभी वह शिक्षार्थ प्रवेश व सेवार्थ प्रस्थान के भाव को आत्मसात कर ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' के भाव को लेकर समग्र कल्याण की धारणा को मन में अंगीकार कर ''सर्वे भवन्तु सुखिन:'' के अनुसार कर्म पथ पर अग्रसर होगा, यही रचनात्मक शिक्षा का वास्तविक स्वरूप है। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग,
सरगुजा वि.वि., अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

रचनात्मकता और दुराग्रह

यथार्थ के स्तर पर जो सामान्य प्रेक्षण है उसे स्वीकारना चाहिए अनावश्यक नवाचार लागू करना व्यवस्था को नुकसान पहुँचाता है। तकनीक के प्रयोग ने मनुष्य की सृजनात्मक क्षमताओं को समाप्त प्राय: कर दिया है। सृजन का आनन्द रचनात्मकता का उत्प्रेरक है इसलिए संसाधनों के प्रति मितव्ययता, सदुपयोग, पुन: प्रयोग का भाव विकसित होना चाहिए। सृजन का आनन्द स्वयं के सृजन से ही नहीं जुड़ा है। प्रकति के, ईश्वर के सृजन को देखने व अनुभव करने की दृष्टि भी रचनात्मकता है, परन्तु रचनात्मकता के परिणाम प्रकट करने से पूर्व उसके प्रयोजन, परिणाम, बौद्धिक एवं तार्किक संगति और सार्थकता को जानना समझना भी आवश्यक है। शिक्षा इसी हेतु से है ।

❑ डॉ. रेखा यादव

रचनात्मकता मनुष्य की अभिव्यक्ति है। इस महत्त्वपूर्ण विधा ने हमें सामाजिक के साथ-साथ सांस्कृतिक आयाम भी दिया है। पशु से भिन्न मनुष्य सिर्फ प्राप्त स्थिति में जीवन जीना ही नहीं सीखता वह उस परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाने का भी प्रयास करता है और उस प्रयास की स्वयं समीक्षा भी कर सकता है। कर्म और चिन्तन की इन गतिविधियों के समानान्तर उसे नया करने, कुछ जानने, सोचने जैसी क्रियाओं में सन्तोषपूर्ण आनन्द का भी अनुभव होता है। इस आनन्द की अनुभूति वैयक्तिक स्तर पर होती है परन्तु इसकी स्वीकार्यता एवं पहचान सामाजिक स्तर पर ही होती है। हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के बेहतरीन पक्ष हमें मानवीय रचनात्मकता से ही प्राप्त हुए है।

आधुनिक पश्चिम में मनुष्य की प्रत्येक गतिविधि का तथ्यात्मक अध्ययन किया गया है । डार्विनवाद के उदय के बाद रचनात्मकता की पहचान भी एक विशिष्ट सम्प्रत्यय के रूप में की गई है जिसमें रचनात्मकता की पहचान ऐसे व्यक्तिगत कौशल के रूप में की गई है जिसमें उपस्थित ज्ञान एवं कल्पनात्मक सूझ के माध्यम से कुछ नया या नये रूप में प्रस्तुत किया जाता है । इस दृष्टि से विचार, वैज्ञानिक खोजें, तकनीक का विकास, विविध कलाओं के माध्यम से मनुष्य की अभिव्यक्तियाँ, रचनात्मकता के अन्तर्गत स्वीकारी जाती है। इसमें सत्य, शिव और सौन्दर्य का बोध है अथवा नहीं ? यह प्रश्न उठाया जाना चाहिए। किसी भी विधा की एकदेशीय अभिव्यक्ति और मूल्यात्मक दृष्टि का विरोध बढ़ना चिन्तन का विषय है।

नवोन्मेष, मौलिकता-रचनात्मकता के पक्ष माने जाते हैं परन्तु शिक्षा व्यवस्था में इसका सीमित स्थान है। शिक्षा मनुष्य को सर्वांगीण विकास का अवसर देती है अनिवार्य रूप से विकास हो जाना हमारा शिक्षा के प्रति दुराग्रह है। अतिवैज्ञानिकता के प्रभाव ने मनुष्य को एक यन्त्र के रूप में मान लिया है। मनुष्य स्वयं में एक सम्भावना है जिसे सही दिशा में अभिव्यक्त होने में मदद करना ही शिक्षा का प्रयोजन है। भारत में शिक्षा का यही प्रयोजन रहा है और पश्चिम में भी सुकरात और प्लेटो ने ज्ञान और शुभ के सम्बन्ध को जिस रूप से प्रकट किया है वहाँ सत्य और सद्‌गुण का स्थान रचनात्मकता से ऊपर है ।

वर्तमान में हमारी शिक्षा व्यवस्था में

नवाचार के नाम पर ऐसी योजनाएँ एवं प्रयोग किये जा रहे हैं जिस पर पुनर्विचार एवं समीक्षा की आवश्यकता है ।

प्रथम तो एक छोटे बच्चे के सम्पूर्ण विकास की जिम्मेदारी शिक्षा व्यवस्था को सौंप दी गई है। आज शिक्षक के पास विद्या अध्ययन करने एवं कराने के अलावा वे सारे कार्य है जो समाज एवं परिवार के है। पाठ्यक्रम के नाम पर अधिकाधिक तथ्यों का समावेश और शासन की रुचियाँ शिक्षा पर बोझ बढ़ाती है ।

जीवन की सफलता-असफलता और उसके भौतिक लक्ष्य समाज व माता-पिता के माध्यम से बच्चों में इस प्रकार डाल दिये गये हैं कि शिक्षाविदों के चिन्तन को मात्र सेमीनार व संगोष्ठी का काम मान लिया है। मातृभाषा में शिक्षा, मूल्यपरक शिक्षा, सकारात्मक व्यक्तित्व का विकास प्राचीन शिक्षाविदों से लेकर आज तक विचार-विमर्श में है परन्तु ठोस क्रियान्वयन हेतु नीतियाँ कहीं नहीं है। समाज और अभिभावकों में साहस का अभाव है, सत्य का जोखिम कोई लेना नहीं चाहता, सभी को तात्कालिक परिणाम चाहिए।

सतत् एवं समग्र मूल्याँकन विद्यार्थी एवं शिक्षक के मध्य होने वाली स्वाभाविक प्रक्रिया है परन्तु इसे नवाचार के नाम पर ऐसे प्रदर्शित किया गया है मानो शिक्षा में क्रान्ति ला दी गई हो प्रत्येक चीज का कागजी मूल्याँकन, प्रचार-प्रसार, विज्ञापन अनावश्यक मानवीय श्रम एवं कौशल की बर्बादी है।

शिक्षा में रचनात्मकता की वृद्धि के उपाय में प्रोजेक्ट निर्माण आवश्यक कार्य माना जा रहा है परन्तु संसाधनों, तकनीक पर अत्यधिक निर्भरता ने इसे बेअसर कर दिया है। समूह के नाम पर कार्य करने की इस प्रोजेक्ट योजना में कुछ विद्यार्थियों को बिना योगदान दिये

सम्मिलित कर लिया जाता है ।

शिक्षा सीखने का माध्यम है तथा सामाजिक-आर्थिक विषमताओं के रहते हमें शैक्षिक संस्थानों की नितान्त आवश्यकता है। इन शैक्षिक संस्थानों में नियम एवं अनुशासन का अपना स्थान है। मानवीय स्वतन्त्रता का अर्थ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता नहीं है। रचनात्मकता की पाश्चात्य दृष्टि को स्वीकारते समय हमें अपनी इस मूल्य दृष्टि को नहीं खोना चाहिए। ज्ञान से अधिक मनुष्य के सुख की सन्तुष्टि को प्रमुखता देकर हमने अपनी शिक्षा व्यवस्था को पंगु बना दिया है। सीखने, जानने का धैर्य आज अभिभावकों के स्वप्न को साकार करने में बाधा बन गया है। मूल्याँकन को इतना सरल बना दिया गया है कि परीक्षाएँ बेअसर हो गयी है। पूरक परीक्षा, अनुत्तीर्णता को ऐसा सामाजिक हौव्वा बना दिया गया है कि प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थी अहँकार और असत्य धारणाओं से पोषित हो रहा है। फलस्वरूप नकल अधिकार है, सबको पास करना जरूरी है, विद्यार्थियों द्वारा आत्महत्या एवं धरना प्रदर्शन इत्यादि, उपस्थिति एवं मूल्याँकन में सख्ती होते ही आरम्भ हो जाता है ।

मनुष्य की भौतिक माँगों की पूर्ति अति आवश्यक अधिकार के रूप में की जानी लगी है। रचनात्मकता के प्रति दृष्टि आज अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा के स्तर पर भी आर्थिक-शारीरिक माँगों की पूर्ति से आवश्यक रूप से जुड़ गई है । प्रबन्धन की शिक्षा में प्रक्रिया से ज्यादा परिणाम पर जोर है। सेवा क्षेत्रों में भी पेशेवर दक्षता को परिणाम और आँकड़ों से इस प्रकार जोड़ दिया गया है कि रचनात्मकता का वास्तविक स्वरूप ही प्रश्न चिन्ह के घेरे में है। पेशेवर नैतिकता और सामान्य नैतिकता के संघर्ष का सवाल उठने लगा है। साहित्य और कलाओं में रचनात्मकता को मनुष्य की कुंठा और नकारात्मक प्रवृतियों को प्रदर्शित करने का अधिकार मान लिया गया है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के नाम पर नये-नये सामाजिक सांस्कृतिक विवाद खड़े किये जाते हैं और दुराग्रही प्रबुद्वता इसको संरक्षण देती है। शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र रचनात्मकता को बनाने से पूर्व रचनात्मकता की अवधारणा और सीमितता को जानना आवश्यक है। रचनात्मकता का अर्थ अनिवार्य रूप से नया सृजन नवाचार नहीं है इसमें तथ्यों के प्रति सूचना ग्रहण की सही क्षमता का विकास एक आवश्यक पक्ष है। शिक्षा की इसमें महत्ती भूमिका है क्योंकि सीखने की प्रक्रिया से गुजरे बिना सूचना ग्रहण की काबिलियत नहीं आती। परिणाम से अधिक महत्त्व सीखने की प्रक्रिया का

है इसमें विद्यार्थी से ज्यादा शिक्षकों एवं अभिभावकों के धैर्यवान होने की जरूरत है। सीखना-जानना मनुष्य का स्वभाव है परन्तु सीखने-जानने के प्रति प्रेम पैदा करना हमारी शिक्षा व्यवस्था का काम है और सीखने जानने का जुनून हो जाना शिक्षा की सफलता है।

कल्पनात्मक सूझ का विकास सीखने जानने की प्रक्रिया के बाद ही आता है। अपवाद सम्भव है परन्तु अपवादों के आधार पर सामान्य निर्देश व योजनाएँ नहीं बनाई जा सकती। यथार्थ के स्तर पर जो सामान्य प्रेक्षण है उसे स्वीकारना चाहिए अनावश्यक नवाचार लागू करना व्यवस्था को नुकसान पहुँचाता है। तकनीक के प्रयोग ने मनुष्य की सृजनात्मक क्षमताओं को समाप्त प्राय: कर दिया है। सृजन का आनन्द रचनात्मकता का उत्प्रेरक है इसलिए संसाधनों के प्रति मितव्ययता, सदुपयोग, पुन: प्रयोग का भाव विकसित होना चाहिए। सृजन का आनन्द स्वयं के सृजन से ही नहीं जुड़ा है। प्रकति के, ईश्वर के सृजन को देखने व अनुभव करने की दृष्टि भी रचनात्मकता है जिसे रविन्द्र नाथ ठाकुर ने प्रस्तुत किया है। अवलोकन, प्रेक्षण, जिज्ञासा, तर्क व कल्पना के नये-नये प्रयोग, नयी सम्भावनाओं की तलाश, नियमों एवं परम्पराओं की समीक्षा रचनात्मकता की माँग है परन्तु रचनात्मकता के परिणाम प्रकट करने से पूर्व उसके प्रयोजन, परिणाम, बौद्धिक एवं तार्किक संगति और सार्थकता को जानना समझना भी आवश्यक है । शिक्षा इसी हेतु से है ।

रचनात्मक का एक रूप लोक साहित्य, संस्कृति से मिलता है जिसमें कभी मनुष्य का ऐन्द्रियात्मक पक्ष असंस्कृत रूप में भी प्रकट हो जाता है। यथार्थ होते हुए भी इसका सौन्दर्य बोध कमतर होता है। शास्त्रीय विधाओं में यह सौन्दर्य बोध उच्चतर श्रेणी का होता है इसे दुराग्रही प्रबुद्धजनों को समझना चाहिए और अश्लीलता के मंडन से बचना चाहिए। रचनात्मकता का सम्बन्ध मनुष्य के आन्तरिक सुख के साथ आत्मविकास से जुड़ा है । व्यक्तिगत सुख और सन्तुष्टि समाज के हित के विपरीत हो सकती है परन्तु आत्मविकास समाज हित से संगत होता है। रचनात्मकता के नाम पर व्यवस्था को कमजोर नहीं किया जा सकता। रचनात्मकता तो सुव्यवस्था के विकास में समाधान देती है। शिक्षा व्यवस्था का कार्य गुणात्मक-रचनात्मक विकास हेतु विद्यार्थी को सक्षम बनाना और अनुभवों की सार्थकता का बोध कराना है। रचनात्मकता का उत्कृष्ट रूप जीवन की किसी भी अवस्था में प्रकट हो सकता है परन्तु इसकी नींव हमारी औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा से तैयार होती है । ❑

(व्याख्याता एवं प्रभारी, दर्शन शास्त्र, सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर)

शैक्षिक मंथन के गुरु रूठे नहीं ठौर विशेषांक विमोचन

शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा 'गुरु रूठे नहीं ठौर' विषय पर 7 जुलाई 2017 को आदर्श विद्या मंदिर, राजापार्क, जयपुर में मुख्य वक्ता प्रो. दयानन्द भार्गव ने कहा कि ''अज्ञानता को दूर करके अपने स्वरूप का ज्ञान करवाने वाला ही सच्चा गुरु होता है।'' उन्होंने सच्चे गुरु को पाने की बात कही एवं हमारे जीवन की स्वप्न की प्रक्रिया पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए कहा कि स्वप्न हमारे अवचेतन मन से आते है। गुरु इस अवचेतन मन को जगाकर ज्ञान का बोध करा देते हैं। अंधकार या नींद को दूर करके ज्ञान का प्रकाश हमारे जीवन में गुरु जलाते हैं। अपने और पराये के भेद को तोड़कर आत्मा के धरातल पर अनुभव करा दें, वह सच्चे गुरु होते हैं। गुरु हमें अस्तित्व से संघर्ष करना, सामंजस्य करना सिखाते हैं एवं अपूर्णता में पूर्णता का बोध कराते हैं। बाहरी दुनिया देश समय के अनुसार बदलती रहती है लेकिन अन्दर की दुनिया नहीं बदलती है। गुरु के प्रति समर्पण की भावना अत्यावश्यक है।

व्याख्यान के प्रारम्भ में प्रास्ताविक करते हुए आयोजित विशेष व्याख्यान के अवसर पर अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के महामंत्री जे.पी. सिंघल ने संगठन की कार्यप्रणाली पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हमारा संगठन शिक्षकों हेतु कर्त्तव्य बोध दिवस, समाज उत्थान हेतु शाश्वत जीवन मुल्यों पर कार्यशाला, दूरदराज के क्षेत्रों में रहकर शिक्षण हेतु अनूठा कार्य करने वाले शिक्षकों का सम्मान करता है। इसी तरह से संगठन अनेक तरह के कार्यक्रम आयोजित करता रहा है।

शैक्षिक मंथन पत्रिका के संपादक संतोष पाण्डेय ने गुरु की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि गुरु की महिमा हमेशा से रही है।

गुरु गोविंद दोउ खडे, काके लागु पाये।
बलिहारी गुरु आपणे, गोविंद दियो बताये।।

गुगल के इस युग में जानकारी तो एकत्रित की जा सकती है लेकिन गुरु के बिना ज्ञान संभव नहीं है।

इस अवसर पर शैक्षिक मंथन पत्रिका के विशेषांक गुरु रूठे नहीं ठौर का अतिथियों द्वारा विमोचन किया गया।

संस्थान के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने सभी का धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा कि वर्तमान समय में गुरु की अत्यंत आवश्यकता है, बिना गुरु के आत्म ज्ञान संभव नहीं है। हमारे जीवन में गुरु का प्रभाव परिलक्षित होता है।

पानी पियो छान के, गुरु बनाओ जानके।

इस अवसर पर संस्थान के सचिव महेन्द्र कपूर, मदस के पूर्व कुलपति प्रो. पी.एल. चतुर्वेदी, डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल, कन्हैया लाल चतुर्वेदी एवं कई गणमान्य लोग उपस्थित रहें।

संस्कारित शिक्षा - रचनात्मक दृष्टि

❑ **बजरंग प्रसाद मजेजी**

आज हमने शिक्षा के नए युग को नई रूढ़ि और नए फैशन वाला बना डाला है। हम बालकों को संस्कारशील विद्यालय में दाखिला दिलाने के बजाए होड़ाहोड़ में ऐसे विद्यालयों में अपने बच्चों को पढ़ाना पसन्द करते हैं, जहाँ जाकर बालक न इधर का रहता है और न उधर का। शिक्षा तो स्वयं एक सेवा है। आज तो शिक्षा और चिकित्सालय विशुद्ध राजनैतिक और व्यावसायिक प्रतिष्ठान बन गए हैं। जो स्कूल जितना महँगा उसका स्तर उतना ही ऊँचा माना जाने लगा है। अब ऐसी शिक्षा का हम क्या करें जिसमें बालक को उठने बैठने, खाने-पीने का विवेक ही न रहे। इस हाय-हैलो के जमाने में माता-पिता और बड़ों को प्रणाम् करने में भी संकोच और शर्म महसूस होती है। भला जिसे अपने अभिभावकों को धोक लगाने में भी लज्जा आती है, वह उनके वक्त-बेवक्त में क्या काम आएगा और क्या सेवा करेगा ।

राष्ट्रीय संत श्री चन्द्रप्रभु ने मानव को संस्कारित किए जाने का आधार शिक्षा को बताते हुए कहा है कि - ''आज हमने शिक्षा के नए युग को नई रूढ़ि और नए फैशन वाला बना डाला है। हम बालकों को संस्कारशील विद्यालय में दाखिला दिलाने के बजाए होड़ाहोड़ में ऐसे विद्यालयों में अपने बच्चों को पढ़ाना पसन्द करते हैं, जहाँ जाकर बालक न इधर का रहता है और न उधर का। शिक्षा तो स्वयं एक सेवा है। आज तो शिक्षा और चिकित्सालय विशुद्ध राजनैतिक और व्यावसायिक प्रतिष्ठान बन गए हैं। जो स्कूल जितना महँगा उसका स्तर उतना ही ऊँचा माना जाने लगा है। अब ऐसी शिक्षा का हम क्या करें जिसमें बालक को उठने बैठने, खाने-पीने का विवेक ही न रहे। इस हाय-हैलो के जमाने में माता-पिता और बड़ों को प्रणाम् करने में भी संकोच और शर्म महसूस होती है। भला जिसे अपने अभिभावकों को धोक लगाने में भी लज्जा आती है, वह उनके वक्त-बेवक्त में क्या काम आएगा और क्या सेवा करेगा (वर्तमान स्थापित वृद्धाश्रम में हकीकत जानी जा सकती है) ऐसी शिक्षा के द्वारा व्यक्ति का विकास उच्च पद प्राप्त करने, समाज में प्रमुख व्यक्ति, उद्योगपति के रूप में तो होगा, लेकिन वह उसकी स्वयं की स्वार्थ चेतना का ही होगा। आखिर व्यक्ति के अपने सौम्य स्वरूप का भी महत्त्व होता है। सबके साथ मिलने-बैठने, सुख-दुख में काम आने की मर्यादा और शालीनता का अर्थ और महत्त्व है, जिसे नकारा जा रहा है। हम चाहे शिक्षा लें या दें, शिक्षा का लक्ष्य पेट भरने तक सीमित न रहे। शिक्षा तो व्यक्ति के विकास का आधार है। शिक्षा को हमें नित्य नवीन विकास के पहलुओं से जोड़ना चाहिए और ज्ञान के नये नायाब विचारों को आत्मसात करना होगा, तभी मानव में रचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होगा। आचार्यों, ऋषियों, गुरुओं के देश भारत को विश्वगुरु के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय जगत में जाना जाता था। यहाँ के श्रेष्ठ शिक्षण संस्थान, गुरुकुलों में विश्व प्रसिद्ध शिष्यों ने वेद, उपनिषद्, पुराण, धर्मग्रन्थों को आधार मानकर भारतीय शिक्षा को ऊँचाइयों पर पहुँचाया था। स्वाभिमान, विवेक और नवाचारों की नूतन पहचान हमारे देश को अद्भुत पहचान दिलाने में सफल रही।

शिक्षा से मानव में रचनात्मक परिवर्तन संभव

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के उद्देश्यों पर चर्चा करते हुए कहा है कि ''शिक्षा वही है जो जीवन संग्राम में समर्थ बनाए।'' उन्होंने वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि ''कुछ परीक्षाएँ पास कर लेना या फिर धुँआधार व्याख्यान देने की शक्ति प्राप्त कर लेना ही शिक्षित हो जाना नहीं कहलाता। पोथियाँ पढ़ लेना ही शिक्षा नहीं है। शिक्षा का अर्थ अपने दिमाग में सूचनाओं एवं जानकारियों को भरना नहीं है, बल्कि जानकारियों का सही उपयोग करना है। शिक्षा वह है जो अपने बल से लोगों को जीवन संग्राम के

लिए संघर्ष करना सिखाए। शिक्षा तो वह है जिसकी सहायता से इच्छा शक्ति का वेग और स्फूर्ति अपने में हो जाए और जिससे अपने जीवन के उद्देश्य पूर्ण हो सके, जिससे व्यक्ति व्यावहारिक बन सके। जीवन में सफलता का मंत्र शिक्षा है, जो हमें सकारात्मक भाव उत्पन्न करती है तथा नैराश्य के सागर से निकालकर आशावादिता से जोड़ती है। भारतीय दर्शन का मूल मंत्र है- नैराश्य से आशा की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाना है। शिक्षा का अर्थ विषय सामग्री तक सीमित नहीं होता अपितु उसके सार्थक उपयोग द्वारा होता है। शिक्षा जीवन को अहँकार, जड़ता, कुँठाओं, कुरीतियों, रूढ़ियों जैसे नकारात्मक कारकों से मुक्त कर जीवन जीने की कला सिखाती है। शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करना कुछ लोगों तक सीमित नहीं है। समानता के इस युग में शिक्षा का द्वार सबके लिए खुला है। विचारों की क्रांति शिक्षा के द्वारा ही संभव है। शिक्षा से मानव में रचनात्मक आवेश आता है और तभी संचरण, सहयोग, समभाव, स्वानुशासन, सहिष्णु जीवन स्थापित होता है। संसार के महान् वैज्ञानिकों जिन्होंने अभूतपूर्व खोज कर, आविष्कार किये वे असाधारण मानव नहीं थे। सामान्य इन्सानों के समान ही ईश्वर ने उन्हें बुद्धि दी थी, परन्तु उन्होंने क्षमताओं को शिक्षा के माध्यम से पहचाना और कुछ कर गुजरने का हौसला उनमें जाग्रत हुआ और उन्होंने नए-नए आविष्कार किए, यह उनकी शिक्षा का ही परिणाम था।

वर्तमान शिक्षा में रचनात्मक सुधार की आवश्यकता

निवर्तमान राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी ने अपने विदाई उद्बोधन में शिक्षा के गिरते स्तर पर चिन्ता करते हुए कहा कि शिक्षागत ढाँचे में सरकार, समाज, शिक्षकों से समन्वय स्थापित कर, सुधार की अपेक्षा की है। शिक्षा के स्तर में गिरावट सभी वर्ग स्वीकार कर रहे हैं, शैक्षिक उन्नयन सभी चाहते हैं, परन्तु गिरते स्तर की जिम्मेदारी कोई भी लेने को तैयार नहीं है। सरकार, शिक्षक, अभिभावक एक दूसरे के पाले में गेंद डालकर इतिश्री कर रहे हैं। सभी दोषारोपण कर, उत्तरदायित्त्व से बच रहे हैं। सरकार ने शिक्षा सुधार हेतु कई आयोगों का गठन किया, लेकिन उनकी अनुशंषाओं को लागू नहीं किया। वित्तीय प्रबन्धन, बजट और शिक्षकों की भर्ती आवश्यकतानुसार नहीं हो पाई, इससे बालकों का भला नहीं रहा है तथा खामियाजा देश को भुगतना पड़ रहा है। ऐसा लग रहा है अभिभावक भी शिक्षा और शिक्षक की बदहाली को खामोशी से देख रहा है। शिक्षक अपने कर्त्तव्य से विमुख है। सरकार द्वारा वांछित परीक्षा परिणाम दिए जाने की बाध्यता के चलते शिक्षण संस्थाएँ येनकेन प्रकारेण जुगाड़ से पास कर, मेरिट में लाने की जुगत में नकल प्रवृत्ति एवं अनैतिक प्रयत्नों को अपना रहे हैं। यह बालकों के भविष्य के लिए भी घातक है। ऐसे टॉपर विद्यार्थी आगे जाकर प्रतियोगी परीक्षा में समय और धन व्यय करने पर भी सफलता प्राप्त नहीं कर पाते हैं और अवसाद में आ जाते हैं, जिसका दुष्परिणाम देखा जा रहा है। शिक्षण संस्थाओं और शिक्षकों को इस प्रवृत्ति को रोक कर विद्यार्थियों को सीखने, याद करने, निरन्तर आगे बढ़ने की तकनीक पर कार्य करने की आदत डालना चाहिए, तभी बालक वास्तविक सफलता प्राप्त कर सकेगा। जुगाड़ की थाली में परोसी गई सफलता न तो स्थाई होती है और न स्वादिष्ट। कुछ संस्थाएँ फर्जी डिग्री देकर लाखों रुपये कमा रहे हैं। ऐसी फर्जी डिग्रियाँ लेने वाले मानसिक विकलांगता खतरनाक संक्रमण में जीते हैं। कभी भी पकड़े जाने पर नौकरी और साख पर बट्टा लग सकता है।

सरकारी विद्यालयों की व्यवस्था सुधारने के लिए सरकार ने सभी स्तर पर 'विद्यालय विकास एवं प्रबन्धन समिति' का गठन कर, पंजीयन कराया है। जिसमें सरकार जनप्रतिनिधि का नामित सदस्य, संस्था प्रधान, शिक्षक, अभिभावक, शिक्षार्थी सदस्य होते हैं। समिति से विद्यालय की आवश्यकता, प्रबन्धन, शिक्षा व्यवस्था मिड-डे-मील की देख रेख कर, विद्यार्थियों के हित में कार्य हो, ऐसी अपेक्षा की गई है, परन्तु देखा यह जा रहा है कि यह मात्र खानापूर्ति और कागजों में सिमटी समिति रह गई है। किसी सदस्य के पास न समय है, न सोच है, न उनके पास रचनात्मक सुझाव है। सरकारी अधिकारी भी मात्र सूची देखकर संतुष्ट हो जाते हैं। प्रबन्धन समिति की नियमित बैठक और बैठक में आये सुझावों की क्रियान्विति तो बिरले ही स्वाभिमानी, निष्ठावान, परिश्रमी संस्था प्रधान कर पाते हैं। इस कारण शिक्षकों का सम्मान भी कम होता जा रहा है। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षक और शिक्षार्थी के वर्तमान सम्बन्धों पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि ''शिक्षक के प्रति श्रद्धा विनम्रता, समर्पण, सम्मान की भावना के बिना हमारे जीवन में कोई विकास नहीं हो सकता। उन देशों में जहाँ-जहाँ शिक्षक-शिक्षार्थी सम्बन्धों में उपेक्षा बरती गई है, वहाँ शिक्षक एक व्याख्याता मात्र रह गया है। वहाँ शिक्षक अपने लिए पाँच डालर की आशा रखने वाले छात्र मात्र शिक्षक के व्याख्यान को अपने मस्तिष्क में भरने वाले रह जाते हैं। इससे अधिक उनमें कोई सम्बन्ध नहीं रहता है।'' अस्तु, सम्पूर्ण शैक्षिक व्यवस्था और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए अभिभावक, शिक्षक को रचनात्मक प्रवृत्ति अपनाकर बालकों के लिए आदर्श प्रस्तुत करना होगा। बालकों को क्रियाशील, आत्मनिर्भर बनाने हेतु प्रेरित करना होगा। बालकों को बुरी संगत से दूर रखने का पूरा प्रयास करना होगा। बालकों में सहयोग और मित्रता की भावना का विकास करना होगा। सद्गुणों के विकास हेतु अच्छा साहित्य के अध्ययन की प्रवृत्ति का निर्माण करना होगा। चरित्र निर्माण हेतु महापुरुषों के जीवन चरित्र का ज्ञान देना होगा। समाज, अभिभावक, शिक्षक, शिक्षार्थी मन से प्रयत्न करेंगे तो शिक्षा का शैक्षिक वातावरण निश्चय ही बदल सकेगा। ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

शिक्षा में रचनात्मकता की आवश्यकता

❑ डॉ. बुद्धमति यादव

पं. विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में शिक्षा हमें तमाम आघातों से बचने के लिए कवच देती है। सभी परिस्थितियों में अपने को अनुकूल बनाने के लिए क्षमता देती है और ऐसी परिस्थितियों में जिनसे हम भटक जाये तो ठीक राह पर आने की सूझ-बूझ देती है। यदि शिक्षा यह नहीं है तो फिर एक पराधीनता है, केवल एक भटकाव है, दिशाहीनता है। भटकाव और दिशाहीनता का मुख्य कारण है शिक्षा में मानवता का अभाव है। 'मूल्य शिक्षा' के माध्यम से युवाओं को मानवतावादी धर्म की शिक्षा दी जानी चाहिए। छात्र राष्ट्र के कर्णधार हैं, उन्हें यह अनुभव कराना आवश्यक है कि जिस प्रकार सूर्य का धर्म ऊष्मा प्रदान करना है ठीक उसी प्रकार मानव का धर्म मानवता के अतिरिक्त कुछ और नहीं हो सकता।

मैं ने भारतीय और विदेशी बच्चों से बातचीत के दौरान देखा कि उनमें एक जैसी आकाँक्षा है और वह है - शांतिपूर्ण, खुशहाल, सुरक्षित देश में जिन्दगी जीना। सृजनशीलता मानव चिंता का आधार है। चाहे कितनी भी गति और स्मृति वाले कम्प्यूटर बन जाएँ, मानव चिंतन का स्थान हमेशा सबसे ऊपर रहेगा। डॉ. अब्दुल कलाम के कथन से दो बातें स्पष्ट हैं- प्रथम-देश में शांति, सुरक्षा और खुशहाली का वातावरण होना और उसी के हितार्थ सृजन करना। द्वितीय - राष्ट्र-निर्माण के साथ-साथ मानव-निर्माण करना, यदि ऐसा नहीं है तो मानव की चिंता करना और उसके लिए ही चिंतन करना ही हमारा उद्देश्य होना चाहिए।

प्रश्न यह उठता है कि क्या शिक्षा द्वारा 'राष्ट्र निर्माण' और 'मानव निर्माण' का उद्देश्य पूर्ण हो पा रहा है? शायद नहीं। यही वजह है कि हमें आज शिक्षा में रचनात्मकता की आवश्यकता पर चिंतन करने की जरूरत महसूस हो रही है।

रचनात्मकता से अभिप्राय है - निर्माण, सृजन। शिक्षा द्वारा निर्माण किसका? युवाओं में चरित्र का, मानवता का, मूल्यों का, राष्ट्रीयता का, सामाजिकता का, साम्प्रदायिक सौहार्द का। क्या शिक्षा द्वारा ऐसा सम्भव है? शिक्षा के माध्यम से समाज में, मानव-मूल्यों, मानव संसाधनों की गुणवत्ता और सांस्कृतिक विविधता के प्रति सम्मान संभव है।

भारतीय मनीषा के प्रत्येक काल में शिक्षा अत्यंत उपयोगी और महत्त्वपूर्ण रही है। राष्ट्र की समृद्धि के लिए 'स्व' का अर्पण कर राष्ट्र का निर्माण करना ही शिक्षा का उद्देश्य रहा। भारत में सदियों से गुरुकुलों, आश्रमों, मठों में दी जाने वाली परम्परागत राष्ट्रीय संस्कृति से ओत-प्रोत शिक्षा को शिक्षकों और शिक्षार्थियों के लिए गुरुतर प्रयास माना जाता रहा है। स्वतंत्रता के समय भारत को एक जैसी शिक्षा प्रणाली विरासत में मिली जो न केवल गुणात्मक दृष्टि से अपर्याप्त थी बल्कि जिसमें संरचनात्मक असंतुलन भी थे। इस कारण कुशल व्यक्तियों का निर्माण करने की प्रवृत्ति, लोकहित की दृष्टि पर आधारित न होकर वैयक्तिक सुख-स्पर्द्धा का साधन बन गई। आज शिक्षा केवल

पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित होकर रह गई है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य का सर्वांगीण विकास करना और उसमें अन्तर्निहित विशिष्ठ गुणों - नैतिकता, स्वाभिमान, सद्व्यवहार, विनम्रता, मौलिक चिन्तन, सृजनात्मक क्षमता, त्याग, सहनशीलता, आत्मविश्वास आदि का विकास करना तथा समाज जीवन और राष्ट्र जीवन की दिशा का दर्शन कराने में शिक्षा भटक चुकी है। युवाओं के लिए कौन सी शिक्षा उनकी आवश्यकताओं को पूरा कर पायेगी, ये प्रश्न महत्त्वपूर्ण हो गया है। शिक्षा हमको मनुष्य बनायेगी, साहित्य हमको संवेदनशील बनायेगा, मेरे संस्कारों को परिमार्जित करेगा, ये सारी चीजें आज के नवयुवकों के लिए हास्यास्पद अथवा बेमानी हो गयी है।

वर्तमान समाज में संकीर्ण मनोवृत्ति, दिशा शून्य राजनीतिक उदारवाद एवं मीडिया तथा वैश्विक सूचनातंत्र के बढ़ते प्रभाव से हममें जो चारित्रिक और व्यावहारिक खुलापन आया है। उसके फलस्वरूप जनसामान्य के नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन तीव्रगति से हुआ है, जिससे शिक्षक-शिक्षार्थी और वर्तमान शिक्षा पद्धति एक कटघरे में खड़े नजर आ रहे हैं।

छात्रों में हिंसा और अपराध प्रवृत्ति का बढ़ना भी मानवीय मूल्यों के ह्रास को बताता है। इसलिए आज शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन अपेक्षित है।

स्वतंत्रता के बाद शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों की संख्या में बेतहासा वृद्धि हुई है। शिक्षा पर व्यय भी बढ़ा है, पर उस अनुपात में क्या सच्चे मनुष्य का निर्माण हुआ है? आज स्कूलों और कॉलेजों से बच्चे एक कारखाने के उत्पाद की तरह पढ़कर बाहर निकलते हैं। एक सी यांत्रिक शिक्षा ग्रहण करके नौकरी पाने को एक-दूसरे से होड़ करते रहते हैं। नौकरी के अतिरिक्त आज इस शिक्षा की उपयोगिता नहीं है।

पं. विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में शिक्षा हमें तमाम आघातों से बचने के लिए कवच देती है। सभी परिस्थितियों में अपने को अनुकूल बनाने के लिए क्षमता देती है और ऐसी परिस्थितियों में जिनसे हम भटक जाये तो ठीक राह पर आने की सूझ-बूझ देती है। यदि शिक्षा यह नहीं है तो फिर एक पराधीनता है, केवल एक भटकाव है, दिशाहीनता है। भटकाव और दिशाहीनता का मुख्य कारण है शिक्षा में मानवता का अभाव है। 'मूल्य शिक्षा' के माध्यम से युवाओं को मानवतावादी धर्म की शिक्षा दी जानी चाहिए। छात्र राष्ट्र के कर्णधार हैं, उन्हें यह अनुभव कराना आवश्यक है कि जिस प्रकार सूर्य का धर्म ऊष्मा प्रदान करना है ठीक उसी प्रकार मानव का धर्म मानवता के अतिरिक्त कुछ और नहीं हो सकता। इसी बात की पुष्टि जयशंकर प्रसाद कामायनी में इस प्रकार करते हैं -

'शक्ति के विद्युतकण जो व्यस्त, विकल बिखरे हैं, निरूपाय, समन्वय उसका करे समस्त, विजयिनी मानवता हो जाए।'

आज समाज में एक ओर जहाँ भौतिक सुख-समृद्धि असीम है वहीं दूसरी ओर वास्तविक सुख-शांति नहीं है, समस्त संसार में असंतोष, विद्वेष, हाहाकार मचा हुआ है। सर्वनाश के भय से समस्त जगत आतंकित एवं त्रस्त है। विश्व को इस सर्वनाश की विभीषिका से बचाना है तो नैतिकता और आध्यात्मिकता को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाना होगा, क्योंकि उसी के द्वारा भौतिक अभ्युदय के साथ आध्यात्मिक कल्याण की सिद्धि सम्भव है।

निष्कर्षत: वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा में सुधार आवश्यक है। राष्ट्र-निर्माण और मानव-निर्माण हेतु शिक्षा व्यवस्था का मानव-मूल्यों पर आधारित होना समय की माँग है। सम्पूर्ण शिक्षा की आधार शिला हमारी प्राथमिक शिक्षा है। अगर नींव कमजोर होगी, तो भवन मजबूत कैसे होगा? अत: प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर ही राष्ट्रीय आदर्शों, संस्कृतियों, मूल्यों को स्थापित किया जाना चाहिए। बालकरूपी पौधे के जेहन में इन बातों को प्रतिस्थापित करना अधिक सहज है। अत: शिक्षा को परम्परा और आधुनिकता के समन्वित रूप में अपनाया जाये, तो शिक्षा को नया सम्बल मिलेगा। साथ ही शिक्षा जीवनोपयोगी, जनउपयोगी तथा राष्ट्र निर्माण में सहायक हो सकेगी।❑

(व्याख्याता हिन्दी, जी.डी.कॉलेज, अलवर)

शिक्षा की सार्थकता : रचनात्मकता

❑ डॉ. ओम प्रकाश पारीक

वस्तुतः पुरातन शाश्वत् ज्ञान का युगानुकूल समष्टिहित में सार्थक प्रयोग ही शिक्षा का कार्य है। विद्यार्थी का अन्तःकरण नये प्रकाश से भरा हुआ रहना चाहिये जिससे वह प्रत्येक वस्तु व परिस्थिति के प्रति अपनी नवीन दृष्टि विकसित कर सके। तथा प्रत्येक कार्य को चारूतर ढंग से सम्पादित करे। प्रतिभा के विकास का भी आधार सृजनात्मक शक्तियों का विकास ही है शास्त्रीय दृष्टि में ऐसी प्रज्ञा जिसमें नये-नये विचार प्रकट हों और नूतन दृष्टि हो उसे प्रतिभा कहा गया है। 'नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा प्रतिभा मता' जो अन्तःकरण विचारशून्य है वह जड़ है वहाँ कोई आविष्कार संभव नहीं है। जबकि जिस अन्तःकरण में नवीन स्फुरण होते हैं। वहाँ सार्थक संभावनायें तुरतः प्रकट होने लगती हैं। उत्तम गुरु के द्वारा उपदेशित शिष्य गुरु प्रदत्त ज्ञान का सार्थक और नवीन प्रयोग करता है तो वह अपनी रचनात्मकता के कारण ही कर पाता है।

'**शि**क्ष् विद्योपादाने' यह पाणिनी का सूत्र यह स्पष्ट करता है कि विद्यागृहण करने के अर्थ में ही शिक्षा शब्द का प्रयोग होता है। 'विद्या' शब्द विद् धातु से बना है जिसका अर्थ है 'वेत्ति अनया इति विद्या' अर्थात् जिसके द्वारा जाना जाता है वह विद्या है तथा जानने का साध्य या उद्देश्य है 'मुक्ति' अतएव शिक्षा का उद्देश्य भी यही है। 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् जो हमारे सभी प्रकार के बन्धनों को (दैहिक, दैविक, भौतिक और आध्यात्मिक) को खोलकर हमें मुक्त करे वह विद्या है। यही हमारे जीवन का उद्देश्य भी है। धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति ही सार्थक जीवन है और इस चतुर्वर्ग की प्राप्ति का साधन है शिक्षा, अतः शिक्षा की उपादेयता जीवन की सार्थकता में है। व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण विकास से यह लभ्य है।

शिक्षा के माध्यम से शिष्य के सर्वाङ्गीण विकास का प्रतीक या चिह्न उसकी रचनात्मकता का विकास है आचार्य भामह जो कि काव्यशास्त्र में उत्कट विद्वान् हैं उन्होंने अच्छी शिक्षा में क्या होना चाहिये इसको प्रतिपादित किया है-

धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्य निषेवणम्

अर्थात् श्रेष्ठ शिक्षा वह है जिससे धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति सुसंगत हो, कलाओं में निपुणता का विकास हो तथा जो यश एवं आनन्द प्रदान करे। इन सभी में रचनात्मकता अनुस्यूत रहती है तभी ये सब बातें सिद्ध होती हैं। इसलिये शिक्षा का यही वैशिष्टय होना चाहिये। शिक्षा की रचनात्मकता शिक्षक और शिष्य दोनों की रचनात्मकता में प्रतिफलित होती है।

शिक्षक के द्वारा दिये जाने वाला ज्ञान रचनात्मकता से परिपूर्ण हो, उसकी पद्धति रचनात्मक हो तथा वह ज्ञान विद्यार्थी में इस प्रकार आत्मसात् हो कि उसकी रचनात्मकता का विकास हो, इसलिये शिक्षण पद्धति, पाठ्यक्रम, शैक्षिक पर्यावरण, उपकरण, परीक्षा सभी में रचनात्मकता की दृष्टि अपेक्षित है। प्राचीन शिक्षण पद्धति में आचार्य इस बात का सदैव ध्यान रखते थे कि विद्यार्थी की रचनात्मकता बाधित न हो। ऐसे ज्ञान को भी भारस्वरूप माना जाता था जो क्रियाविहीन अर्थात् आचरण में प्रविष्ट न हो। इसलिये कहा गया है-

'शास्त्राण्यधीत्यपि भवन्ति मूर्खाः
यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्'

अर्थात् शास्त्रों का अध्ययन करके भी मूर्ख ही रहता है, किन्तु जो क्रियावान् अर्थात् रचनात्मकता से परिपूर्ण है वही विद्वान् है। आचार्य में ये सभी योग्यतायें सिद्ध होती थीं जिससे वह अपने शिष्य को रचनात्मक बना सके। छान्दोग्य उपनिषद में आचार्य आरुणि अपने शिष्य श्वेतकेतु को अत्यन्त, गंभीर एवं क्लिष्ट आत्मज्ञान की व्यावहारिक ढंग से शिक्षा देते हैं जिससे वह सरल हो जाता है। और शिष्य की रचनात्मक प्रवृत्ति में विकास करता है। इसको हम उपनिषद् में वर्णित गुरु और शिष्य के निम्न संवाद के आधार पर समझ सकते हैं -

आचार्यः- न्यग्रोधा फलमतः आहर
(इस बरगद के फल को यहाँ लाओ)
शिष्यः - इदं भगव इति
(हे भगवन् मैं इसे ले आया)
आचार्यः - भिन्धीति
(इसे तोड़ो)
शिष्यः - भिन्नं भगव इति
(हे भगवन् तोड़ दिया)
आचार्यः किमत्र पश्यसि
(यहाँ क्या देखा)
शिष्यः - अणव्यः इव इमा धानाः भगवन्
(अणु के समान ये अंकुर हैं)
आचार्यः - आसाम अङ्क एकां भिन्धि
(इनके टुकड़े करते जाओ)
आचार्यः - किमत्र पश्यसि
(यहाँ क्या देखा)
शिष्यः - न किञ्चिन् भगवन्
(कुछ भी नहीं भगवन्)

आचार्यः - य वै सौम्य एतमणिमानं न निभालयसे एतस्य वै सौम्य-एष अणिम्नः एवं महान् न्यग्रोध (तव पुरतः) तिष्ठति।

(इनके सूक्ष्म रूप को हम देख नहीं पाते हैं किन्तु उसमें ही महान् न्यग्रोध (बरगद) का वृक्ष निवास करता है) अतः आत्मा की सूक्ष्मता एवं

महानता को हम देख नहीं पाते हैं। इस प्रकार से क्रियात्मक पद्धति से दिया गया ज्ञान निश्चित ही विद्यार्थी के लिये रुचिकर एवं चिन्तन में सृजनात्मकता का विकास करता था।

वस्तुत: पुरातन शाश्वत् ज्ञान का युगानुकूल समष्टिहित में सार्थक प्रयोग ही शिक्षा का कार्य है। विद्यार्थी का अन्त:करण नये प्रकाश से भरा हुआ रहना चाहिये जिससे वह प्रत्येक वस्तु व परिस्थिति के प्रति अपनी नवीन दृष्टि विकसित कर सके। तथा प्रत्येक कार्य को चारूतर ढंग से सम्पादित करे। प्रतिभा के विकास का भी आधार सृजनात्मक शक्तियों का विकास ही है शास्त्रीय दृष्टि में ऐसी प्रज्ञा जिसमें नये-नये विचार प्रकट हों और नूतन दृष्टि हो उसे प्रतिभा कहा गया है। 'नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा प्रतिभा मता' जो अन्त:करण विचारशून्य है वह जड़ है वहाँ कोई आविष्कार संभव नहीं है। जबकि जिस अन्त:करण में नवीन स्फुरण होते हैं। वहाँ सार्थक संभावनायें तुरत: प्रकट होने लगती हैं। उत्तम गुरु के द्वारा उपदेशित शिष्य गुरु प्रदत्त ज्ञान का सार्थक और नवीन प्रयोग करता है तो वह अपनी रचनात्मकता के कारण ही कर पाता है। कठोपनिषद् में जब पिता वाजश्रवस् को विश्वजित यज्ञ में हजारों गायों को दान करते हुये पुत्र नचिकेता देखता है तो उसके मन में यकायक नया विचार उत्पन्न होता है कि ये सभी गाये पीतोदका (जिन्होंने अन्तिम बार पानी पी लिया), जग्धतृणा (जिन्होंने अन्तिम बार घास खा लिया) है इनको देकर पिताजी क्या सिद्ध करना चाहते हैं। और उसकी सार्थक सोच से निकलता है- एक प्रश्न ''कस्मै मां दास्यति? हे पिताजी मुझे किसे देंगे? इस प्रश्न में नवीनता है। सार्थकता है समष्टिगत् चिन्तन है अर्थात् आप इन गायों को जो मरने वाली हैं यज्ञ में देकर औपचारिकता पूर्ण कर सकते हो किन्तु आप मुझे जो (सर्वप्रिय हूँ) किसे देंगे। बालक का यह प्रश्न पिता के अन्त:करण को जब परिष्कृत करता है तो उससे जीवन की नश्वरता का उत्तर निकलता है। 'मृत्यवे त्वां ददामि' मैं तुम्हें मृत्यु को देता हूँ इस उत्तर से आप्लावित हो वह बालक नचिकेता यम से प्राप्त अमरता के ज्ञान से परिपूर्ण होता है यह उसके चिन्तन की सृजनात्मकता है। आचार्य: शब्द का अर्थ भी यही है कि वह सैद्धान्तिक ज्ञान नहीं देता अपितु शिष्य के आचरण को परिपक्व बनाता है, प्रत्येक अर्थ चाहे वे भौतिक हो, दैविक हो या आध्यात्मिक हो उनको चुन-चुनकर शिष्य में भरता है, तथा उसकी बुद्धि को चुनता है, रचनात्मक या सभी अर्थों के प्रति उसकी बुद्धि की प्रतिक्रिया को उत्तम बनाता है।

आज के शैक्षिक पर्यावरण में रचनात्मकता की बढ़ोतरी के लिये बहुत बात होती हैं लेकिन मूर्त रूप में संस्थाओं में फलित नहीं हो रही हैं। हमें हमारी जड़ों का चिन्तन करना होगा और औपचारिकतायें छोड़ सार्थक कदम बढ़ाने होंगे। शिक्षा व्यवस्था में सभी गुणात्मक बातें परस्पर सापेक्ष होती हैं ऐसा नहीं है कि अन्य गुणात्मक तत्त्वों की अवहेलना करते हुये हम किसी एक गुणात्मक बात में वृद्धि कर लें जैसे शिक्षक प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम ही ले लें, तब हमें यह भी विचार करना है कि जो शिक्षण कार्य में प्रबलतम रुचि वाला एवं योग्य व्यक्ति है उसी को शिक्षक प्रशिक्षण दिया जावे, अगर ऐसा होता है तो वह पात्र व्यक्ति अपने विद्यालयों में जाकर सभी प्रकार की शैक्षिक गुणात्मकताओं को स्थापित कर सकेगा। इसी प्रकार विद्यालय का भौतिक पर्यावरण, प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम, पाठ्यसहगामी क्रियायें, परीक्षायें तथा अन्यान्य सभी प्रवृत्तियों में रचनात्मकता परिलक्षित होनी चाहिये। सभी प्रकार से विद्यार्थी के व्यवहारगत परिवर्तन की जाँच की व्यवस्था होनी चाहिये और उसमें कमी पाये जाने पर समुचित मनोवैज्ञानिक प्रेरणा तथा उचित बौद्धिक प्रशिक्षण की व्यवस्था हो। विद्यार्थियों को कक्षा शिक्षण की जगह पर बाहरी वातावरण में प्रकृत्ति के साथ तादात्म्य करवाते हुये खेलकूद एवं पाठ्यसहगामी क्रियाओं के द्वारा उनकी सृजनात्मक शक्ति को बढ़ाने का कार्य होना चाहिये। अगर विद्यार्थी का चिन्तन सृजनात्मक हो जायेगा तो वह स्वत: ही अपने रचनात्मक कार्यों का अन्वेषण करेगा, आज हम जो व्यावसायिक शिक्षा देने की बात करते हैं वह भी उसके रचनात्मक चिन्तन पर आधारित है। चाहे वह शिक्षा का प्राथमिक स्तर हो चाहे माध्यमिक या उच्च शिक्षा के द्वारा यदि विद्यार्थी की सृजनात्मक शक्ति का विकास नहीं हुआ है तो वह सार्थक शिक्षा नहीं कही जा सकती। किसी भी सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम में व्यावहारिकता लायी जा सकती है, इसलिये शैक्षिक भ्रमण, कार्यशालायें, काव्यपाठ, कविता लेखन, सामूहिक वाद-विवाद, समाजोपयोगी उत्पादन कार्य ये सभी विद्यार्थी के चिन्तन में रचनात्मकता एवं व्यावहारिकता का विकास करते हैं। सृजनात्मक विषय जैसे- चित्रकला, संगीत एवं विज्ञान के विषय प्रत्यक्ष रचनात्मकता को ग्राह्य करवाते हैं किन्तु समुचित शिक्षण और पर्यावरण के द्वारा यदि विद्यार्थी के अन्त:करण में सृजनात्मकता आ गयी है तो वह प्रत्येक विषय एवं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नये और सार्थक ढंग से विचार करता हुआ कार्य करता है और यही शिक्षा के द्वारा सर्वांगीण विकास का प्रतीक है। प्राचीन शिक्षा पद्धति में इसकी समुचित व्यवस्था थी।

हमारे प्राचीन ज्ञान का नवीन युग के साथ-सार्थक प्रयोग सृजनात्मक शक्ति के बिना संभव नहीं है। भौतिक-रसायन-वानस्पतिक-जीव-आयुर्वेद-खगोल-ज्योतिष-भौगोलिक-मनोवैज्ञानिक-शिल्प-तर्कशास्त्र-सैन्य विद्या-चौसठ कलायें- पुरुषार्थ चतुष्ट्य से सम्बन्धित सम्पूर्ण ज्ञान हमारे शास्त्रों में विद्यमान है हमारी शिक्षा द्वारा यह नवीन दृष्टि से ग्राह्य होना चाहिये क्योंकि न ही पुराना होने से सब अच्छा है तथा न ही नया होने से सब खराब है आवश्यकता है पुरातन में नवीन दृष्टि की और युगानुकूल सार्थक प्रयोग की इस बात को महाकवि कालिदास ने सुन्दर ढँग से व्यक्त किया है-

पुराणमित्येव न साधु सर्वं
न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्त: परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते
मूढ़: परप्रत्ययनेय बुद्धि:।।

(मालविकाग्निमित्रम्)

इस चिन्तन से रचनात्मकता के साथ शिक्षा सत्यं, शिवं, सुन्दरं से तादात्म्य करवाकर जीवन को सार्थकता प्रदान करती है।❑

(व्याख्याता संस्कृत, बाबा नारायणदास महाविद्यालय, चिमनपुरा, जयपुर)

दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य तो यह है कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था ने युवाओं को भ्रमित कर दिया और संपूर्ण समाज ऐसे 'मिथकों' के ढेर पर बैठ गया, जिसे दूर करना सहज नहीं है। पहला मिथक यह कि 'शिक्षा' के मायने डिग्रियाँ हासिल करना है। दूसरा मिथक यह है कि विज्ञान और उसकी विभिन्न शाखाओं से जुड़े विषय, प्रतिभा के उचित मानक है, तीसरा मिथक यह है कि साहित्य कला और सामाजिक विज्ञान जैसे विषय प्रतिभाविहीन विद्यार्थियों का चुनाव होते हैं, चौथा मिथक यह है कि सफलता और आर्थिक स्वावलम्बन के लिए प्रबंधन डिग्री जैसी उच्च स्तरीय, शिक्षा की आवश्यकता है। ऐसे अनेक मिथकों के मध्य, युवाओं की आकाँक्षाएँ स्वयं ही भ्रमित होकर, आगे बढ़ने का साहस कर नहीं पाती।

रचनात्मकता और युवा भारत

❑ डॉ. ऋतु सारस्वत

बीते दिनों सरकार के तीन सालों की उपलब्धियों और असफलताओं का विश्लेषण हर मंच से हुआ। इससे पूर्व भी इस तरह के विश्लेषण होते आए हैं, परन्तु युवा जो देश का भविष्य है, उसकी समस्याओं को विश्लेषित करने की चेष्टा बीते दशकों में नहीं की गई है। इसमें किंचित कोई संशय नहीं है कि किसी भी देश के युवा के जीवन का सर्वप्रमुख और सर्वप्रथम प्रश्न, उसका जीविकोपार्जन होता है। इसमें अति धनाढ्य वर्ग या उच्च मध्यम वर्ग के युवाओं को अपवाद स्वरूप देखा जा सकता है। परन्तु ऐसे युवाओं की संख्या बहुत कम है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि देश के युवाओं के सामने 'रोजगार' प्राप्त करना सबसे बड़ी चुनौती है। एक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि क्या आज की शिक्षा व्यवस्था, युवाओं की प्रतिभाओं को पहचानने में सक्षम है या फिर किताबी ज्ञान पर आधारित डिग्रियों की लंबी फेहरिस्त के बीच, देश के युवाओं में उस स्तर की प्रतिभा का अभाव है जितनी संबंधित नौकरियों के लिए चाहिए। खासकर सूचना प्रौद्योगिकी और विज्ञान पारिस्थितिक तंत्र में रोजगार ढूँढ़ते युवाओं में प्रतिभाओं की भारी कमी है। हाल ही में जारी एक आँकड़े में दावा किया गया है कि इस देश के 95 प्रतिशत इंजीनियर सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट के क्षेत्र में नौकरी करने के लायक नहीं है। जब इंजीनियरिंग की डिग्री या डिप्लोमाधारी युवाओं का यह हाल है, तो कल्पना की जा सकती है कि जो युवा शिक्षा भी पूरी नहीं कर पाए या जिनके पास तकनीकी डिग्रियाँ नहीं हैं, उनका क्या हाल होगा? स्वाभाविक है युवा भारत की यह तस्वीर अच्छी नहीं कही जा सकती, इसलिए यह जानना और समझना बहुत जरूरी हो जाता है कि क्यों, देश का युवा, उन स्वप्नों को पूरा नहीं कर पा रहा है जो कि वह अपने लिए देखता है।

दरअसल हमारा सामाजिक पर्यावरण कुछ निश्चित परिपाटियों के मध्य ही सुगठित होता है, और उसके द्वारा सुनिश्चित पैमानों के आधार पर ही 'सफलता' और 'असफलता' की परिभाषा रची जाती है। स्वतंत्रता पूर्व, वैदिक संस्कृति में या फिर मध्यकाल में देश के युवा वर्ग ने किन चुनौतियों का सामना किया इसके संबंध में, विभिन्न मंचों में चर्चाएँ होती रही हैं। परन्तु विगत तीन दशकों में भारत का युवा किन चुनौतियों का सामना कर रहा है इसके गहन विमर्श की आवश्यकता को शायद

अनुभव नहीं किया गया क्योंकि समाज की निश्चित परिपाटियों के विरुद्ध जाना कुचेष्टा माना गया। अगर हम 19वीं सदी के अंत तक आते-आते, युवा वर्ग की आकाँक्षाओं का आँकलन करने का प्रयास करें तो पाएँगे कि उनकी आकाँक्षाएँ पल्लवित होने से पूर्व ही, दबा दी गईं। उन्हें परिवार और समाज के निश्चित दायरों के मध्य ही 'सफलता' के पैमानों में से किसी एक का चुनाव करने की अनुमति दी गई और अगर हम यह सोचते हैं कि आज इस दायरे में कहीं परिवर्तन आ गया है तो यह हमारा भ्रम मात्र है। डॉक्टर या इंजीनियर बनने के चुनाव के मध्य, शायद ही कोई युवा कभी यह कहने का साहस जुटा पाया कि उसकी दिलचस्पी विज्ञान की इन शाखाओं में नहीं है। कला और संस्कृति को जानने, पढ़ने या अपने जीवन का उद्देश्य बनने का साहस कर पाना सहज नहीं रहा। क्योंकि महत्त्वपूर्ण यह नहीं है कि आप क्या चाहते हैं महत्त्वपूर्ण यह है कि आप ऐसा क्या करें कि जिससे शीघ्र-अतिशीघ्र आप को रोजगार मिल सके। अगर 'रोजगार' प्राप्त करना ही शिक्षा व्यवस्था का अंग होता तो भी निराशा की स्थिति नहीं होती।

दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य तो यह है कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था ने युवाओं को भ्रमित कर दिया और संपूर्ण समाज ऐसे 'मिथकों' के ढेर पर बैठ गया, जिसे दूर करना सहज नहीं है। पहला मिथक यह कि 'शिक्षा' के मायने डिग्रियाँ हासिल करना है। दूसरा मिथक यह है कि विज्ञान और उसकी विभिन्न शाखाओं से जुड़े विषय, प्रतिभा के उचित मानक है, तीसरा मिथक यह है कि साहित्य कला और सामाजिक विज्ञान जैसे विषय प्रतिभाविहीन विद्यार्थियों का चुनाव होते हैं, चौथा मिथक यह है कि सफलता और आर्थिक स्वावलम्बन के लिए प्रबंधन डिग्री जैसी उच्च स्तरीय, शिक्षा की आवश्यकता है। ऐसे अनेक मिथकों के मध्य, युवाओं की आकाँक्षाएँ स्वयं ही भ्रमित होकर, आगे बढ़ने का साहस कर नहीं पाती। अगर वाकई उच्च स्तरीय शिक्षा के मानक सत्य होते तो, बेरोजगारों की एक लंबी फौज नहीं दिखाई देती। मौजूदा शिक्षा व्यवस्था में समझने के बजाय रटाया जाता है, और युवाओं को हुनर सिखाने और उनकी सोच बदलने की कोशिश नहीं की जाती। सच तो यह है देश के युवा ऐसी डिग्रियों के साथ बाहर निकल रहे हैं, जो उन्हें कुछ नहीं सिखाती। ऐसे दौर में इस शिक्षा का कोई मतलब ही नहीं है, जब नवाचार का महत्त्व बढ़ने के साथ तकनीक की गति भी बढ़ती जा रही है। ऐसे में शिक्षा की कमजोर बुनियाद वाले लाखों छात्रों का भविष्य स्वाभाविक तौर पर उज्ज्वल नहीं हो सकता तो ऐसे में क्या? जीवन का लक्ष्य और उद्देश्य, जीवन की असीम संभावना, समस्या और समाधान समझने के लिए गहन विचार शक्ति का होना अनिवार्य है। यह शक्ति हमें यथार्थ शिक्षा द्वारा ही प्राप्त हो सकती। यह सत्य है कि जिस तादाद में जनसंख्या बढ़ रही है उस अनुपात में रोजगार सृजित करना असंभव है। व्यवस्थाओं पर अंगुली उठाने के बजाय, यह आवश्यक हो जाता है कि स्वयं यह विचार किया जाए कि जिस राह को उन्होंने चुना है क्या वह उनके स्वाभावगत है।

युवा बल को युवा शक्ति में रूपान्तरित करने के लिए सबसे पहले युवा को अपने स्वभाव को पहचानने का प्रशिक्षण देना होगा। स्वभाव के अनुरूप कार्य का चयन करने से पूरी क्षमता व संभावना का विकास हो सकता है। भीड़ का हिस्सा बन, अपनी आजीविका का चयन करने के स्थान पर अपने स्वभावानुरूप शिक्षा व तदनुरूप व्यवसाय का चयन आत्मसंतुष्टि का भाव देगा। 'स्वभाव से स्वावलम्बन' युवा आकाँक्षाओं की पूर्ति का मूलमंत्र सिद्ध हो सकता है। वह कार्य या विषय जो रुचिकर हो, उसकी राह में आई चुनौतियाँ भी दुष्कर प्रतीत नहीं होती। परम्पराओं का निर्वाहन करने के प्रयास में रुचिकर विषयों का चुनाव न करना स्वयं के लिए दुखद होता है परन्तु संपूर्ण व्यवस्था में भी असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है। सच तो यह है कि वर्तमान परिस्थितियों में, युवा आबादी को उपयोगी कौशल में प्रशिक्षित करना, फिर इनके लिए पर्याप्त रोजगार उपलब्ध कराना तथा उद्योग कृषि व सेवा क्षेत्र में संतुलन स्थापित करना अपने आप में बड़ा ही दुष्कर कार्य है। उच्च शिक्षा में असंतुलित वृद्धि के कारण एक ओर हम बड़ी संख्या में तैयार हो रहे इंजीनियर्स (अभियंताओं) को उचित रोजगार नहीं दे पा रहे हैं वहीं दूसरी ओर अनेक आवश्यक कार्यों के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध नहीं है। एक आँकलन के अनुसार स्नातक स्तर पर कला क्षेत्र में घटते प्रवेश के कारण आने वाले दशकों में पूरे विश्व में भाषा शिक्षकों की कमी होगी। तकनीकी क्षेत्र के बढ़ते प्रभाव के कारण मूलभूत विज्ञान यथा भौतिकी, रसायन तथा जीव विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान करने के लिए पर्याप्त संख्या में वैज्ञानिक नहीं मिल रहे हैं।

इन वास्तविकताओं के साथ, एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यहाँ यह उत्पन्न होता है कि वे जो चित्रकला, भाषा या संगीत में रुचि रखते हैं, जिनके सपनों के ताने बाने इनके आसपास बुन जाते हैं, उनके सामने जीविकोपार्जन का संकट, उन्हें उन पंक्तियों में सम्मिलित होने के लिए विवश कर देता है, जहाँ पहले ही लंबी कतारें हैं। आर्थिक विवशताएँ, देश की युवा आबादी के एक बहुत बड़े भाग की चुनौती है, जिसके चलते वह उच्च शिक्षा से वंचित हो रहे हैं। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक विभेद एक गंभीर चुनौती बन कर उभरी है। शहरी और ग्रामीण

क्षेत्रों के अमीर-गरीब छात्रों के बीच बढ़ती इस खाई को यूनेस्को ने चिंताजनक करार दिया है। ग्लोबल एजुकेशन मॉनिटरिंग रिपोर्ट का हवाला देते हुए यूनेस्को ने दुनिया के सभी देश की सरकारों से गैप (अंतराल) को कम करने की अपील की है। यूनेस्को ने एक सुझाव में बताया है कि सरकारी स्तर पर एक ऐसी ऐजेन्सी हो जो छात्र सहायता से संबंधित सभी तरह की जरूरतों के बीच तालमेल स्थापित कर सके। इन जरूरतों में शिक्षा ऋण, अनुदान और स्कॉलरशिप आदि हो सकते हैं। ग्लोबल एजुकेशन मॉनिटरिंग का मानना है कि छात्रों की बढ़ती संख्या के लिहाज से उनको आर्थिक सहायता पहुँचाना सहज नहीं है पर नीतिगत व्यवस्था के जरिए सरकार इन चुनौतियों से पार पा सकती है। बैंक व अन्य वित्तीय संस्थानों से छात्रों को मिले ऋण की मासिक किश्त छात्रों की मासिक आय के 15 प्रतिशत से कम होनी चाहिए। ऐसा होने पर छात्र न केवल पाठ्यक्रम पूर करा पाएँगे बल्कि ऋणों की अदायगी करना भी उनके लिए आसान हो जाएगा। इन नीतिगत विषयों पर चर्चा और उनके अमलीकरण के मध्य एक अंतराल और भी है और वह है स्वयं की पात्रता सिद्ध करना।

भारतीय सामाजिक परिवेश में यह दलित समुदाय से संबंधित छात्रों और लड़कियों के लिए बेहद ही चुनौती भरा लक्ष्य है। क्योंकि असमानता की जड़ें आज भी इतनी गहरी हैं कि यह सहज स्वीकार ही नहीं किया जाता कि दलित युवा और छात्राएँ, प्रतिभाशाली हो सकते हैं। इन दोनों ही वर्गों के लिए कुछ निश्चित परीधियों के खाके खींच दिए गए है। और अगर इन खाकों को पार करके, वह स्वयं को सिद्ध करने की चेष्टा भी करते हैं तो नकारात्मकतापूर्ण वातावरण में, उनके लिए यह बेहद कष्टकारी होता है। सामाजिक पृष्ठभूमि में रची बसी विचारधाराओं ने इस कदर मकड़जाल फैला रखा है कि उसमें उलझ कर, उससे बाहर सोचना संभव ही नहीं हो पाता । वर्ष 2013 में भारतीय विश्वविद्यालय पर 'किंग्स कॉलेज लंदन' के एक अध्ययन में यह उल्लेखित है कि, भारतीय उच्च संस्थानों में दलित छात्रों की योग्यता संशय के घेरे में रहती है और जाति के आधार पर भेदभाव और उपहास से दलित छात्रों में यह भावना घर कर सकती है कि वे उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए योग्य नहीं है। लैंगिक असमानता और जातिगत भेदभाव से लड़ता युवा वर्ग, अपनी आकाँक्षाओं को कैसे पूरा करे, यह प्रश्न सहज सुलझता प्रतीत नहीं होता। इन चुनौतियों के जूझने के साथ देश का युवा, अपने ही देश में हिन्दी भाषा की उच्च शिक्षा में अवहेलना के कारण, न केवल अपना आत्मविश्वास खो रहा है अपितु अपनी आकाँक्षाओं की राह में यह उसके लिए सबसे बड़ी चुनौती सिद्ध हो रही है।

महात्मा गाँधी ने कहा था कि 'यदि हिन्दी, अंग्रेजी का स्थान ले तो कम से कम मुझे तो अच्छा ही लगेगा। अंग्रेजी अंतर्राष्ट्रीय भाषा है लेकिन वह राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती...।' तकनीकी पुस्तकों से लेकर राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र जैसे तमाम विषयों की पुस्तकों की हिन्दी भाषा में अनुपलब्धता के चलते, देश के एक बड़े हिस्से को, अपने विषय को समझने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है वहीं उनकी रचनात्मकता भी इससे प्रभावित होती है। हिन्दी भाषा बोलने और अंग्रेजी ना बोल पाने वाले छात्रों को हेय दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति ने 'शिक्षा' के उद्देश्यों पर ही प्रश्नचिन्ह अंकित कर दिया है। क्या यह कल्पना की जा सकती है कि अपने ही देश में 'हिन्दी मीडियम टाइप' जैसी उलाहना के साथ हिन्दी भाषी छात्रों को अलग-थलग करने की प्रवृत्ति उच्च शिक्षा में बदस्तूर कायम है। क्या इससे बड़ी चुनौती किसी देश के लिए हो सकती है कि उसके ज्ञान की निर्भरता, उसकी राष्ट्रभाषा या मातृभाषा ना होकर किसी अंतर्राष्ट्रीय भाषा पर हो।

भारतीय युवाओं की आकाँक्षाओं के मध्य एक बड़ी चुनौती, बँधे बँधाए मार्गों के विपरीत न जाने की भी है और इसका कारण परिवार और शिक्षा संस्थाओं में निरंतर दिया जाने वाला, वह मनोवैज्ञानिक दबाव है जो लीक से हटकर सोचने की अनुमति नहीं देता। लाभ और हानि का गणित उन्हें उन्हीं मार्गों की ओर प्रेरित करता है जो सहज हो और अर्थ अर्जन में सहायक हो। हमें यह स्वीकारना ही होगा कि सामान्य जन की नजर में विद्या चाहे जो भी हो 'अर्थकारी' होनी चाहिए। शिक्षा की एक अविचारित उदार किस्म की प्रणाली अपनाई गई, जिसमें बहुत से युवा सिर्फ इसलिए सम्मिलित होते हैं क्योंकि उनके समक्ष इसके सिवाय और कोई विकल्प नहीं होता है। वर्तमान यथार्थ यह है कि न केवल ज्ञान देने और पाने में बल्कि ज्ञान सृजन में भी सामाजिक संदर्भों की निर्णायक भूमिका होती जा रही है। आज का बदलता सामाजिक संदर्भ उच्च शिक्षा की पूरी प्रक्रिया को अनुबंधित किए हुए है और यही कारण है कि नवाचारों के मार्ग बेहद संकुचित है। आकाँक्षाओं और चुनौतियों के मध्य, 'शिकायतें', 'व्यवस्था के दोषों को ढूँढ़ने की प्रवृत्ति', 'आयु का व्यवधान', 'आर्थिक समस्या' और ऐसी ही अनगिनत दलीलें हैं तो दूसरी ओर इन सबको दरकिनार करते हुए सिर्फ अपने लक्ष्य को पाने का जुनून। चुनाव हमारा है कि हम आकाँक्षाओं के व्यवधान को लेकर नकारात्मक हों, या अपने प्रयासों को लेकर सकारात्मक। ❑

(व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, पुष्कर)

आधुनिक शिक्षण में रचनात्मकता जरूरी

शिक्षण में रचनात्मकता का समावेश होने पर विद्यार्थी के शिक्षा प्राप्ति का उद्देश्य मात्र डिग्री प्राप्त करना नहीं रहेगा वरन् वह स्वयं के उत्थान के साथ सामाजिक उन्नयन के लिये भी प्रयत्नशील रहेगा। प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति से प्रेरित रचनात्मक शिक्षण विद्यार्थी के अन्दर सुप्त मौलिकता व सृजनशीलता को प्रकट करेगा। शिक्षण में रचनात्मकता के माध्यम से विद्यार्थी में बड़े से बड़ा सामाजिक परिवर्तन लाने की क्षमता विकसित हो सकेगी। तथा राष्ट्रीय विकास के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी।

❑ डॉ. रेखा भट्ट

शिक्षण एक रचनात्मक विधा है। यह विद्यार्थी की मौलिकता व सृजनशीलता को प्रकट करने के साथ उसमें सामाजिक परिवर्तन लाने की क्षमता भी प्रदान करती है। शिक्षक एवं शिक्षार्थी के बीच ज्ञान के प्रवाह को रचनात्मकता के माध्यम से ही स्वत: स्फूर्त बनाया जा सकता है तथा सीखने व सिखाने की प्रक्रिया में परिपूर्णता आती हैं। विद्यार्थी में अपने अज्ञान को दूर करने व कुछ प्राप्त करने की महत्वाकाँक्षा रहती है। शिक्षक ही विद्यार्थी में ज्ञान की रिक्तता को पूर्ण कर शिक्षार्थी के जीवन को सम्पूर्ण बना सकते हैं। क्रियात्मक एवं भावात्मक जुड़ाव द्वारा प्रदान किया गया शिक्षण विद्यार्थी को जीविका प्राप्त करने के अनेक विकल्पों के साथ वास्तविक ज्ञान उपलब्ध कराता है। यह ज्ञान आधारित रचनात्मक शिक्षण ही विद्यार्थी को सुखी व समृद्ध जीवन की आधारशिला प्रदान करता है। उसको भविष्य में आने वाली कठिन समस्याओं का हल ढूँढने व संघर्ष करने का भी विवेक प्रदान करता है।

भारत में वैदिक काल से शिक्षण में रचनात्मक कार्यों द्वारा सम्पूर्ण जीवन को उत्कृष्ट बनाने का उद्देश्य निहित रहता था। अत: विद्यार्थी में शिक्षा के माध्यम से सृजनशीलता व कर्मठता के गुणों का विकास करने का प्रयत्न किया जाता था। जीविका प्राप्त करने सम्बन्धी विधाओं के साथ, उसे कौशल प्रशिक्षण एवं वेदों, उपनिषदों का ज्ञान भी दिया जाता था। यह समग्र शिक्षण विद्यार्थी के उन्नत व्यक्तित्व का गठन करने में सहायक होता था। अपने आसपास की भौगोलिक व सामजिक परिस्थितियों को जानना व अन्वेषण करना भी व्यवहारिक ज्ञान के लिये आवश्यक होता था। प्रत्येक विद्यार्थी की समाज के लिये अपनी उपयोगिता सिद्ध करने पर ही उसके शिक्षण का वास्तविक मूल्यांकन होता था। शिक्षा पूर्ण होने पर गुरु द्वारा शिक्षार्थी को सामाजिक जीवन में ज्ञान का रचनात्मक उपयोग करने का सन्देश तैत्तरीय उपनिषद् में प्रदान किया गया है-

''सत्यं वद धर्मं चर, स्वाध्यायान्मा प्रमद।''

अर्थात्-''सत्य बोलने, धर्म का पालन करने व स्वाध्याय द्वारा निरन्तर ज्ञान में वृद्धि करते हुए सम्पूर्ण मानवता की सेवा ही शिक्षण का अन्तिम लक्ष्य है।''

रामायण व महाभारत जैसे भारत के प्राचीन महाकाव्य सृजन धर्मिता की अनुपम देन है, जो आज भी जीवन संघर्ष में व्यक्ति का पथ प्रदर्शन करते हैं। भारतीय विद्वान आर्यभट का खगोल शास्त्र व शून्य की खोज प्राचीन भारतीय शिक्षण में नवाचार के अनुपम उदाहरण है। विश्व में मानवता को भारत की महानतम देन है। कठिन गणितीय सूत्रों का सरल हल देने की दक्षता से हतप्रभ कर देने वाले रामानुजन के असीमित ज्ञान को विदेशी शिक्षण जगत ने पहचाना और आगे बढ़ाया। महान वैज्ञानिक सी.वी. रमन ने न्यूनतम साधनों में विश्व को रमन सिद्धान्त देकर भारत की अन्वेषण क्षमता का परिचय दिया। शिक्षा में रचनात्मकता के माध्यम से जीवन मूल्यों को समाहित करने वाले असंख्य उदाहरण आज भी भारत की अमूल्य धरोहर है।

मुगलकाल के दौरान भारतीय शिक्षा के वैज्ञानिक आधार में कमी आई तथा शिक्षण में धार्मिकता का प्रभाव बढ़ने के बाद भी जीवन मूल्यों में कमी नहीं आ सकी। ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में मैकालयी शिक्षण पद्धति प्रचलित हुई तथा भारतीय गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को षड्यन्त्रपूर्वक भारत के कोने-कोने से मिटा दिया गया। अंग्रेजों द्वारा थोपी गई शिक्षण पद्धति में पुस्तकीय अवधारणाओं को ही अन्तिम सत्य मान लिया गया तथा जीवन के सत्यों को जानने, समझने तथा जन-जन के लिये उजागर करने के प्रयास समाप्त कर दिये गये। विद्यार्थी के सोचने विचारने व अपनी कल्पनाओं को साकार करने के अवसर समाप्त होते गये। अपनी कलात्मकता को स्वाभाविक रूप से विकसित करने सम्बन्धी गतिविधियाँ नहीं होने के, परिणामस्वरूप विद्यार्थी की रचनात्मकता पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों व परीक्षाओं के वार्षिक अनुक्रम में बँध कर रह गई।

... शेष पृष्ठ 27 पर

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा के गुरुवन्दन कार्यक्रम में राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

राजकीय महाविद्यालय, सिकराय (दौसा) में गुरुवन्दन कार्यक्रम

राजकीय महाविद्यालय, बिलाड़ा में गुरुवन्दन कार्यक्रम

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटपूतली में गुरुवन्दन कार्यक्रम

राजकीय महाविद्यालय, शाहपुरा (जयपुर) में
गुरुवन्दन कार्यक्रम

राजकीय महाविद्यालय, केकड़ी के गुरुवन्दन
कार्यक्रम में प्रो. पुरुषोत्तम परांजपे

राजकीय महाविद्यालय, तिजारा (अलवर) में आयोजित गुरुवन्दन कार्यक्रम

कोटा के तीनों राजकीय महाविद्यालयों के संयुक्त गुरुवन्दन कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए
रुक्टा (राष्ट्रीय) के प्रदेश महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता

राजकीय पी.जी. महाविद्यालय, किशनगढ़ बास (अलवर) में गुरुवन्दन कार्यक्रम

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर में गुरुवन्दन कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए कुलपति प्रो. कैलाश सोडानी

राजकीय गौरी देवी महाविद्यालय, अलवर में वृक्षारोपण

राजकीय महाविद्यालय, केकड़ी में वृक्षारोपण

राजर्षि राजकीय महाविद्यालय, अलवर में वृक्षारोपण

राजकीय महाविद्यालय, अनुपगढ़ (श्रीगंगानगर) में वृक्षारोपण

राजकीय महाविद्यालय, अजमेर में वृक्षारोपण

राजकीय महाविद्यालय, चिमनपुरा में वृक्षारोपण

राजकीय लोहिया महाविद्यालय, चूरू में गुरुवन्दन कार्यक्रम

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ खरगोन द्वारा आयोजित
गुरुवन्दन कार्यक्रम

राजकीय महाविद्यालय, अनूपगढ़ (श्रीगंगानगर)
में गुरुवन्दन कार्यक्रम

कर्नाटक राज्य माध्यमिक शिक्षक संघ की बैंगलुरु में आयोजित प्रदेश कार्यकारिणी बैठक को
संबोधित करते प्रदेश के अतिरिक्त महामंत्री श्री संदीप बुधियाल

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, जींद इकाई द्वारा आयोजित गुरुवन्दन कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रीय उपाध्यक्ष
श्री जगदीश सिंह चौहान, साथ में उपायुक्त जींद श्री अमीत खत्री एवं जींद विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. राजवीर सौलंकी

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय), जोधपुर जिला कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग को
सम्बोधित करते हुए प्रदेश संगठन मंत्री श्री महावीर प्रसाद सिंघल

पृष्ठ 22 का शेष

आजादी के 70 वर्षों बाद भी हमारी शिक्षा, औपनिवेशिक शिक्षण पद्धति को ढोते रहने के कारण एक औपचरिकता बन कर रह गई है। शिक्षा की अनिवार्यता जैसे नियमों ने इसे एक अपरिहार्य आवश्यकता बना दिया। यह शिक्षा कुछ मात्रा में रोजगार तो प्रदान कर सकती है किन्तु शिक्षण में नवाचार, वैज्ञानिकता व संवैधानिक मूल्यों का समावेश नहीं करती। अंग्रेजी व अंग्रेजियत के अनुकरण से शिक्षण में रचनात्मकता आधारित भारतीय शिक्षा पद्धति पूर्ण रूप से विलुप्त हो गई है। आज स्वाध्याय तथा अन्य मूल्यों को जीवन के लिये अनावश्यक माना जाने लगा है। वर्षों पुरानी पुस्तकीय अवधारणाओं व जानकारियों को कण्ठस्थ कर अधिकतम अंक प्राप्त करना ही विद्यार्थी के जीवन की उपलब्धि बन गयी है। स्वयं की क्षमताओं को पहचान कर उन्हें विकसित करना और इसका समाज के हित के लिये अनुप्रयोग संभव नहीं होता अत: विद्यार्थी में नवीन सृजन करने की महत्त्वाकाँक्षा उत्पन्न नहीं हो पाती। शिक्षण की वास्तविक जीवन से भिन्नता एवं अनुपयोगिता शिक्षार्थी को सामाजिक सारोकारों से दूर कर देती है।

आधुनिक शिक्षण रोजगार प्राप्ति पर केंद्रित है, अत: इसे ही व्यावहारिक मान लिया गया है। एक ओर शिक्षक के लिये शिक्षा मात्र आजीविका प्राप्ति का साधन है। वही दूसरी ओर विद्यार्थी के लिये कक्षा कक्षीय शिक्षण किसी प्रकार की रुचि पैदा करने में असमर्थ होने के कारण शिक्षा उसके लिये भारी बोझ बन जाती है। ऐसी परिस्थितियों में विद्यार्थी प्राथमिक शिक्षा के बाद ही पढ़ाई छोड़ने लगते है।

आजादी के समय की तुलना में विद्यालय एवं महाविद्यालयों की संख्या में अपार वृद्धि होते हुए भी विद्यार्थियों के ड्रॉप आउट की संख्या बढ़ती जा रही है। वहीं जानकारी बढ़ाने के लिए ऑनलाइन कोर्स करने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती जा रही है। आज अनेक क्षेत्रों में प्रवेश की आधुनिकतम तकनीकी व कार्य प्रणाली से, विद्यार्थी अवगत नहीं होते हैं। अपने विषय में निष्णात होने के बावजूद उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी भी रोजगार पाने की पात्रता नही रखते। 12-15 वर्ष के आधारभूत शिक्षण द्वारा कॅरियर बनाने में विद्यार्थी अपनी समस्त ऊर्जा व्यय कर देते हैं। आधुनिक शिक्षण में, वर्षों से चले आ रहे पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षक जानकारियों का दोहराव करते हैं तथा विद्यार्थी उन्हें स्मरण कर परीक्षा में सफल हो जाते हैं। रचनात्मकता के अभाव में विद्यार्थी को अपनी क्रियाशीलता तथा विचारों द्वारा प्रतिक्रिया व्यक्त करने के अवसर नहीं मिलते आज शिक्षित विद्यार्थी स्वयं की सोच विकसित करने व अपने दृष्टिकोण से विषय को समझने व विश्लेषण करने की सामर्थ्य ही रखते।

यदि प्राथमिक स्तर से ही रचनात्मक शिक्षण द्वारा विद्यार्थी की विशिष्टताओं को पहचान कर सही दिशा दी जाए तो उच्च शिक्षा में किये जाने वाले शोध व अनुंसधान भी मौलिक व प्रासंगिक बन सकेंगे। डिग्रीधारी विद्यार्थी शिक्षित किन्तु अनुपयोगी मानव संसाधन की भीड़ नहीं बनेगे। आज रोजगारीय प्रतिस्पर्धा को ज्ञान, कौशल व मूल्यों पर आधारित रचनात्मक शिक्षा से पृथक करके देखना होगा। शिक्षक द्वारा कक्षा-कक्षीय शिक्षण को जीवन्त बनाने के लिये विषय सम्बन्धी नवीन प्रयोगों व तथ्यों को प्रस्तुत करने से तथा प्रत्यक्ष अवलोकन द्वारा विद्यार्थी में विषय वस्तु के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी। यह जिज्ञासा ही विद्यार्थी को नया सोचने व खोज करने की प्रेरणा देती है।

रचनात्मकता का गुणात्मक विश्लेषण संभव है, किन्तु वर्तमान में प्रचलित संख्यात्मक विश्लेषण द्वारा विद्यार्थी की प्रतिभा का आकलन न्यायसंगत नहीं रहता। विद्यार्थी के आधे अधूरे ज्ञान का सामूहिक रूप से अंकों के स्कोर के रूप में किया गया मूल्यांकन, उसे हतोत्सहित करता है। शिक्षण के साथ तात्कालिक परीक्षण एवं मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थी की कमियों का पता कर उनमें सुधार के प्रयास किये जा सकते हैं। उनकी योग्यता व प्रतिभा को पहचान कर उन्हें परिष्कृत किया जा सकता है। विद्यार्थी अपनी संपूर्ण मानसिक शक्ति के साथ अपने अधिकतम प्रयासों को फलीभूत करेगा। इसके परिणामस्वरूप रचनात्मक उपलब्धियों को सराहने व पुरस्कृत करने से विद्यार्थी का आत्मविश्वास बढ़ेगा।

आजकल ऑनलाइन शिक्षण के तेजी से बढ़ते हुए प्रभाव के बाद भी पुस्तकों और पुस्तकालयों का महत्त्व आज भी कम नहीं हो सका है। इनके माध्यम से शिक्षण पद्धति में आज पुन: स्वाध्याय को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। मोबाइल के बढ़ते उपयोग से शिक्षण में लेखन व श्रवण की प्रवृत्ति समाप्त हो गई है जो सृजनात्मकता के लिये आवश्यक है। सुनकर लिखने के अभ्यास से विद्यार्थी में सीखने व मनन की प्रक्रिया सहज रूप से विकसित होगी। शिक्षक द्वारा प्रदान की गई वैज्ञानिकता पर आधारित कार्ययोजनाएँ विद्यार्थी की क्रियाशीलता व दक्षता को बढ़ाने में सहायक होगी।

विद्यार्थी की रचनात्मकता बढ़ाने के लिये आवश्यक सभी उद्देश्यों का शिक्षा नीति में स्पष्ट उल्लेख करके ही रचनात्मक शिक्षण को क्रियान्वित किया जा सकता है। शिक्षण में रचनात्मकता का समावेश होने पर विद्यार्थी के शिक्षा प्राप्ति का उद्देश्य मात्र डिग्री प्राप्त करना नहीं रहेगा वरन् वह स्वयं के उत्थान के साथ सामाजिक उन्नयन के लिये भी प्रयत्नशील रहेगा। प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति से प्रेरित रचनात्मक शिक्षण विद्यार्थी के अन्दर सुप्त मौलिकता व सृजनशीलता को प्रकट करेगा। शिक्षण में रचनात्मकता के माध्यम से विद्यार्थी में बड़े से बड़ा सामाजिक परिवर्तन लाने की क्षमता विकसित हो सकेगी। तथा राष्ट्रीय विकास के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी। ❑

(व्याख्याता-रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

The point is, "creativity cannot be created artificially". Creativity has to be spontaneous, genuine and authentic. Training shall only polish them, but training shall not create the requisite 'Sthaibhava' as directed in the Upanishads. Sthaibhava is the permanent disposition of the mind: perhaps it may be in born. We come to the point that creativity cannot be taught, a point that one has to accept. Poetries are simple words after all; but we have seen how magical those very words which we already knew become to create another world amazing, when it comes to minds like those of Kalidasa.

Education, Humanities and Creativity

❑ **Dr. TS Girishkumar**

Creativity is a thought that can be made appli cable to perhaps every realm. The Sanskrit term 'Charvita Charvana' – just repeating the same thing on and on – indicates lack of creativity. Such repetition, repetition anarchically smothers growth, or creativity. The Vedopanishadic knowledge tradition would not have been so developed, if there were no serious room for innovation and creativity, where what was authentically new remained always welcome.

The Buddhists are vocal about a theory of momentariness, kshanikavada. This of course is influenced from the Upanishadic wisdom of temporality, but the Buddhists expanded it and became more vocal. Momentariness implies impermanence, further implying permanence as the ultimate reality. This indicate change as an inevitable way with phenomenal world, and inescapable reality. There could be two ways in which one may look at the notion of change; one sudden or drastic change, which is revolutionary, another is slow, steady and gradual change which is evolutionary. Most European theories centre around revolutionary change, but for Bharat, change had ever been evolutionary, confirming and affirming from stage to stage, step by step.

Education must also undergo such changes from time to time, given the requirement of both space and time. Time may be something universal to begin with, but space is all the more important. What is needed at one space may entirely be different at another space. Naturally, what is needed for Bharat has to be Bharatiya.

Education

Professor Santosh rightly points out the plight of Kashmiri youth, who are supposed to be students. We find them pelting stones instead of going to schools or colleges with books to learn. They are intoxicated in sermons given by crafty clerics, who do so for their own nefarious ends, keeping these hap-

less youths ignorant of their real goals and objectives. They are prompted to go for somethings projected as lofty, and they are effectively kept under hegemony through ideology, money and even authority. Had there been anything even close to either innovation or creativity, this would never have been the case with the youth of some parts in Kashmir.

We have an example from Christianity as instance of creativity into religion. History tells us of Papacy and medieval dark period of Europe, during when Catholicism acted barbaric and inhuman. One could say that they were not really much different from either Taliban or the IS. But then, through time, they allowed creativity and innovation into their theology and subsequently into their religion, first making several things flexible within their religion, and in due course changing many practices. Actually, there is absolutely no room in any of the Semitic religions for any change, but Christianity had made it happen, perhaps it was necessary for their survival as a religion in increasingly materialistic Europe. Perhaps they realised that they are running out of 'clientele' and were compelled to make innovations as we see both from history and practice.

Similar innovation and creativity also must happen with education of all levels. This had not been done, unfortunately. What might be happening in Europe in the area of education is one thing, but we are intimately concerned with what is happening with our education scenario. People who had been involved with education in Bharat seem to have gone for very short cuts, just by either copying or imitating what they thought as the best from Europe to begin with. Two things happen here, on the one hand there is already a formidable influence from the McCauley and Max Muller combination pattern of education system, and on top of that there is copying from Europe.

Creativity

There cannot be any growth or progress without creativity. Growth or development makes phenomenon dynamic, without which phenomenon turns into static and still, just dead. Take the instance of languages for example: a language that is constantly changing and evolving remains live, and when there is no human activity of 'language game', the language becomes static and dead. Education, where knowledge is imparted is also akin to these. If what is getting taught is just repetition of what had been in record for long, we won't be able to make much headway. These may be McCauley programme or copy from elsewhere, but till such time it is made creative, the whole thing shall turn into fiasco.

For Bharat, we have seriously huge room for creativity. To begin with, our Vedopanishadic knowledge tradition itself demands creativity from time to time. Bharat had long recognised multiplicity, plurality as well as creativity. This offers tremendous flexibility and we see these in our knowledge tradition. None of the knowledge texts are closed, they always remained open to interpretations, and there had been interpretations to perhaps every text from time to time. This indeed is evident from numerable Bhashyas, Tikas, Glossers and so on for every text. For most texts of the Vedopanishadic knowledge tradition, there had been interpretations once in every fifty years in the least. The interpreting acharyas were so creative, that most often the interpretations became much more instructive and enlightening than the original text itself.

Maharishi Akshapada Gautama's Nyayasutra itself is one instance to this. I had come across some thirty-five plus interpretations of the original text of

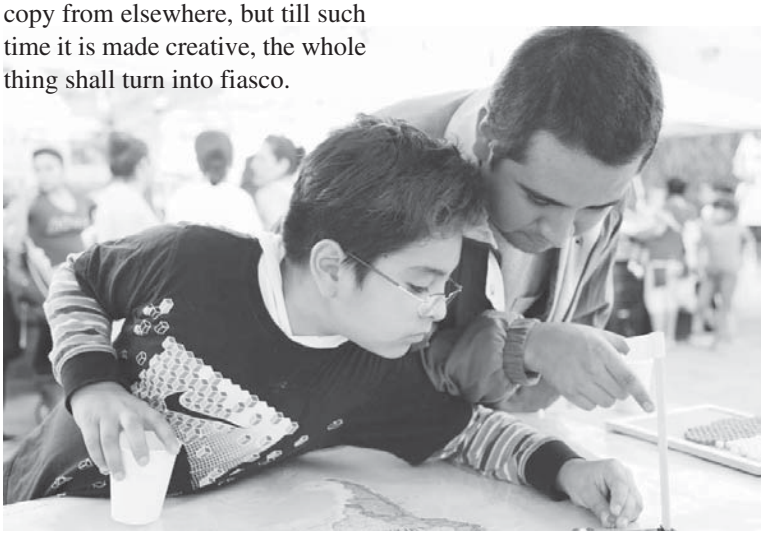

Maharishi Gautama, and this apart, there also came interpretations of interpretations and so on. The extent of creativity with these Bhashyas remains amazing to any perceiving mind. Nyayasutra has Bhashyas first from people of Vedic Dharma, but subsequently we find Acharyas from Buddhism taking to interpret the text with tremendous creativity. After Shankaracharya, we again find the Vedic scholars taking reins of interpretations and it went on.

European theologians created theories of and for interpretations, and subsequently it was made into a system of theories under the name hermeneutics. It began as originally interpreting legal texts as well as religious dogmas, mainly hoisted by theology study centres. Later in Philosophy, hermeneutics became another theory, known as 'theories of interpretation' that is supposed to be instructing on 'how to interpret'. Could there be laws, norms as do and don'ts of interpretation? Our prize question shall be, will such interpretations framed through theories of interpretation be creative? Natyashastra is the first ever text on dance. Would scholarship on Natyashastra result in creating good dancing? Is it necessary for a Samavedin to be a good singer?

The point is, "creativity cannot be created artificially". Creativity has to be spontaneous, genuine and authentic. Training shall only polish them, but training shall not create the requisite 'Sthaibhava' as directed in the Upanishads. Sthaibhava is the permanent disposition of the mind: perhaps it may be in born. We come to the point that creativity cannot be taught, a point that one has to accept. Poetries are simple words after all; but we have seen how magical those very words which we already knew become to create another world amazing, when it comes to minds like those of Kalidasa. We all know how those 'Ritus' are but Kalidasa wrote Ritusamhara, creating a vision not very imagined by many.

Creativity in education

Indeed, education has to be creative. The flash of insight that comes within the scientist makes him a genius and creator of new scientific principles. No one knows how and from where this flash of genius happens. On a routine, a student of science, if he has to be a scientist, goes creative naturally. But how about humanities? A student of humanities is not encountered with instruments which might generate creative impulses, the humanities' student is just left alone.

There will always be creative teachers, and everyone shall vouch for such creative teachers who made impacts and differences in their lives. But their numbers shall always be less. As a result, the only refuge and solace shall be to create syllabi those can enable creativity, for both teachers as well as students. For Bharat, this shall be not a very difficult task, we just will have to find the 'will'. We also will have to go for the not so easy task of going into the Vedopanishadic knowledge tradition digging for relevant instructions towards improvising our humanities syllabi.

Philosophy is yet another sad plight. The influence of European philosophy is so much, even in Bharat Bharatiya Darsana is also taught under the name of philosophy apart from so many copy papers from European universities. It is only when a teacher is so adamant to provide the Bharatiya perspective to those, there may be some positive teaching, which indeed shall require a different kind of vocation. Nonetheless, it should be born in mind that and proposed changes in humanities has to begin with philosophy teaching in Bharat, and then only an extension to other area gets possible. To this end, one has to look into the situation of academic philosophy in Bharat and do few things to get it better. Unfortunately, philosophy does not produce revenue for anyone. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

Innovative Institution or Pathetic MBMEC

It was suggested in the recent meeting that this should be switched over to Research University as per RUSA (i.e. Rashtriya Uchchatar Shiksha Abhiyan) norms. In the scheme existing Institution can only be converted in to this having potential for this, where grants come from the Central Government and rest is local i.e. Students/ Faculty and Employees etc. Needless to say that this Institution has shown its excellence on many occasions at different platforms may it be UPSC Engineering services exams or otherwise. Its offspring namely MNIT, Jaipur and UCE, RTU Kota are examples of this.

❑ **Prof. A. K. Gupta**

Recently the news shocked me with many others that MBMEC has been put under No Admission category from session 2018-19. This has been done by AICTE after visit of experts on 10th June this year, the visit was undertaken under the directions of Honourable Rajasthan High Court. The pioneer institution who taught ABC of Engineering in the state of Rajasthan has been done so as to say. The Institution which started before the oldest IIT in the country has done so, this alone puts many questions to ponder.

The Institution came into lime light in the year 2001 when its Alumni demanded this to be converted it in to an IIT in the state as has been done in some states. The Institution has produced many shining alumnus e.g. Shri Nand Lal Joshi alias babaji, Shri Gopal Arya, Shri Ashok Jain presently Chief Secretary in the state and Col. Sona Ram Chowdhary presently MP from the state along with many alumni may be more than 25,000 in number all over the world leading the world a new dimension in the field of Engineering.

The Institution has travelled a long distance from 15-08-1951 to the present date, starting from degree in Civil Engineering to developing in multiple branches in various Engineering disciplines in GAS/ SFS categories making it over 700 students to be admitted in a year in different courses at UG/ PG and PhD level. The Institution which was selected as one of the ten centers in the Country to teach at PG/ Ph D level under QIP(Poly) from Polytechnics all over the country. As is normal The Institution has witnessed its excellence at UG level/ PG level/ Research level/ FAS to its faculty to serve various institution abroad/ Foreign students and other institutions, R & D grants through various schemes of different agencies/ Good number of PhDs produced to the present state of putting this pioneer institution in helm of affairs. Reasons are obvious: interference of regional Politics and Administrations has put this institution in the present state.

It was suggested in the recent meeting that this should be switched over to Research University as per RUSA (i.e. Rashtriya Uchchatar Shiksha Abhiyan) norms. In the scheme existing Institution can only be converted in to this having potential for this, where grants come from the Central Government and rest is local i.e. Students/ Faculty and Employees etc. Needless to say that this Institution has shown its excellence on many occasions at different platforms may it be UPSC Engineering services exams or otherwise. Its offspring namely MNIT, Jaipur and UCE, RTU Kota are examples of this.

The important day in the history of MBMEC is well recognised by one and all i.e. 14-07-1962 when this Engineering institution was merged with the then Newly established University of Jodhpur on the pretext of some personal interest. The college became colony of the University, only recently when the now Jai Narain Vyas University was converted in to the Divisional University and with induction of Online its status changed and it became financially stronger but not enough to meet out its pension beneficiaries. The institution could not participate in TEQUIP I and II, the scheme which was helpful to face lift similar other institutions.

Recently with filing of PIL with Honourable Rajasthan High Court triggered activities into improvement of the Institution. Everybody in the western Rajasthan across Aravali series is concerned about this. In particular this institution if given due importance can fetch laurels to the state. The case may be very well taken care of, May it be unconventional energy sources e.g. Solar /Wind generated turbines or solar thermal converted in to electrical energy. Steel grade lime, Petroleum products, as well as some other local problems which can pave way to for some international level e.g. Earthquake Resistant Construction, Winds, Expansive soils, Floods and rural development, environmental etc. Civil and Structural Engineering Departments alone can put in the category of earning extra money through professional consultancy category.

The institution served to nurture every upcoming institution e.g. IIT in its campus It has served the guest institution more his own child may it sharing faculty / staff for classes etc. Needless to say that the institution has all the potential to become Research University with support of other departments/ faculties namely Management/ Pharmacy/ Computer Applications etc. Separation from JNV University should not be an issue as this has been approved by its BOG i.e. Syndicate.

Presence of Local numerous prestigious Institutions e.g. CAZRI, AFRI, DMRC, IIT, AIIMS, National Ayurveda University, National Law University, S.P. Police University and of course Directorate of Technical Education which can be a major tool to fulfill Prime Minister's dream of Unnat Bharat through Make in India and Kaushal Vikas Kendra through present system of ITIs/ Polytechnics.

All private institutions can be attached to this to maintain uniformity in the skills at all level. Skilled personnel can be developed in different branches including bar bender, masons etc. This will help in maintaining common standards with other similar institutions e.g. Foot Wear Institution, Fashion Technology Institutions etc. The main focus will shift to Research on local problems providing solutions to international fraternity.

Engaging youths at different levels will streamline their energy and preventing them from unsocial activities by involving them in to constructive activities. The outcome will be of practical importance as this could be applied to the field directly. The greater interaction between local industrialists and faculty members and other institutions will be more helpful. A boon to the industrialists and local youth and investors.

Retired teachers can be engaged in tutorial/ practical classes thus satisfying their pension benefits, Guest faculties which are available in plenty can be given opportunity to serve the society. Overall development of the society can targeted. Many dreams can be put to the reality. By doing this many examinations can be focused upon by extending through Coaching or by other means to serve the society in a better way.

This will be helpful in promotion of local language in better understanding of the technicalities. Education can be put to the reach of common person which is one of the objective of RUSA. E. D. Cell or Incubation Centre, Innovation Club, Photography club or similar other clubs can be created /merged to achieve the goals. Communication skills can be improved, Local problems can be put forward for solution to achieve the goals in the interests of local benefits.

Solar Passive House could be created, Science Centre was also developed along with E.D. Cell. Similarly NDT cum State Retrofitting Clinic was also established. This helped by providing many useful contributions to the society, leave aside the local benefits but other adjoining states could get benefits. Simply curbing post retirement benefits in terms of academics interests only to the otherwise talented persons is simply a harm put to the society. The cost benefit ratio study should be conducted to see the effects.

As concluding remarks it can be put that such potential qualified institution and faculty may be allowed to get an opportunity by converting present Institution i.e. MBM Engineering College be converted to Research University which is a part of RUSA. Needless to say that by doing so society will get overall benefits in the time to come. In the last role of father remains to guide to get a position of leader rather than to act as a follower. ❑

(Professor, Structural Engineering, J. N. V. University, Jodhpur)

नई शिक्षानीति बनाए जाने के सन्दर्भ में

15 अगस्त और शिक्षा की स्वतन्त्रता

स्पष्ट है कि 15 अगस्त की तिथि का ऐतिहासिक संबन्ध देश की स्वतन्त्रता के बजाय देश की शैक्षिक स्वतन्त्रता से अधिक है। परेशानी की बात यह है कि 1905 में देखा गया राष्ट्रीय शिक्षा का सपना अभी पूरा नहीं हुआ। मोदी सरकार ने शिक्षा में बदलाव की आशा जाग्रत की थी मगर अभी तक कुछ खास नहीं हो पाया है। नई शिक्षानीति बनाने के लिए इसरो वैज्ञानिक कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में नई टीम बनाई गई है। शासक दल भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री अमित शाह ने श्यामाप्रसाद मुखर्जी को याद करते हुए शिक्षा को भारतीय मूल्यों पर आधारित करने का आह्वान किया है। आशा है कुछ सार्थक कार्य हो पाएगा।

❑ दीप्ति चतुर्वेदी

191/1 बोव बाजार कलकत्ता के बंगाल राष्ट्रीय महाविद्यालय

अधिकाँश लोग 15 अगस्त का सम्बन्ध अंग्रेजी शासन से देश की स्वतन्त्रा के रूप में देखते हैं। बहुत कम लोग यह जानते हैं कि 15 अगस्त का शिक्षा की स्वतन्त्रता से बहुत पुराना सम्बन्ध है। 15 अगस्त 1906 को देश की शिक्षा को मैकाले के जाल से मुक्त करने हेतु 191/1 बोव बाजार कलकत्ता के बंगाल राष्ट्रीय महाविद्यालय में राष्ट्रीय शिक्षा प्रारम्भ हुई थी। 200 रुपए प्रतिमाह की दर से दो वर्ष के लिए वह भवन किराए पर लिया गया था। केवल युवक ही इसमें पढ़ने नहीं आते थे अपितु कलकत्ता के अनेक शिक्षक भी देश भक्ति का पाठ पढ़ने इस महाविद्यालय में आते थे।

भारत के स्वतन्त्रता दिवस का 15 अगस्त के साथ कोई भारतीय ऐतिहासिक संबन्ध नहीं है। 1929 में जब पण्डित जवाहरलाल नेहरु कांग्रेस के अध्यक्ष थे तब ब्रिटिश राज से पूर्ण स्वराज की माँग की गई थी। 1930 से 26 जनवरी को स्वतन्त्रता दिवस मनाए जाने लगा। यह माँग दिन-प्रतिदिन बलवती होती गई तो ब्रिटिश संसद में 4 जुलाई 1947 को भारत की स्वतन्त्रता का बिल प्रस्तुत किया गया था। बिल एक पक्ष में स्वीकार कर लिया गया। इस अधिनियम में लार्ड माउन्टबेटन को अधिकृत किया कि वह 30 जून 1948 तक भारत को स्वतन्त्र कर दें। तब सी राजगोपालाचार्य ने कहा कि उस तिथि तक ब्रिटिश सरकार के पास ऐसा कुछ अधिकार नहीं बचेगा जिसे वह भारत को हस्तान्तरित कर सके। तब लार्ड माउन्टबेटन ने भारत को स्वतन्त्र करने की तिथि को आगे बढ़ा कर अगस्त 1947 कर दिया। अगस्त की 15 तिथि चुनने के पीछे भी भारतीय इतिहास नहीं है। 15 अगस्त 1945 को जापान ने मित्र राष्ट्रों के सामने आत्मसमर्पण किया था। 15 अगस्त 1947 उसकी दूसरी सालगिरह थी।

कर्जन प्रशासन ने भारत के राजनैतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र पर ब्रिटिश आधिपत्य को मजबूत करने के लिए शिक्षा को हथियार बनाने का प्रयास प्रारम्भ किया था। इसी प्रयास के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अधिनियम 1904 लाया गया। विश्वविद्यालयों की सीनेट व सिन्डिकेट को

पुनर्गठित कर उसमें गोरों का बहुमत स्थापित किया गया जिससे नीति निर्धारण गोरों के नियन्त्रण में रहे। बंगाल के बुद्धिजीवियों ने सरकार की इस चाल को समझ कर विरोध के उपाय प्रारम्भ कर दिए। 5 नवम्बर 1905 को सतीसचन्द्र मुखर्जी द्वारा स्थापित ड्वान सोसाइटी के बेनर तले एक विरोध सभा आयोजित की गई। सभा को रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सतीसचन्द्र मुखर्जी व हिरेन्द्रनाथ दत्त द्वारा संबोधित किया गया। वक्ताओं ने विद्यार्थियों का आह्वान किया कि वे सरकार द्वारा नियन्त्रित विश्वविद्यालयों से अपने को अलग कर लें। नेताओं ने कहा कि ब्रिटिश सरकार शिक्षा संस्थाओं का उपयोग स्वतन्त्रता आन्दोलन को कमजोर करने के लिए कर रही है। सभा में भारतीयों के सहयोग से राष्ट्रीय विश्वविद्यालय खोलने की घोषणा की गई। सभा में उपस्थित राजा सुबोधचन्द्र मलिक ने राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन के लिए एक लाख रुपयों का दान घोषित किया। उस समय एक लाख रुपए बड़ी रकम थी। राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन को मूर्त रूप देने में राजा सुबोधचन्द्र मलिक ने जो भूमिका निभाई वह उनके द्वारा दान में दी गई राशि से बहुत अधिक हितकारी सिद्ध हुई। उस समय ब्रिटिश सरकार से लड़ना आसान कार्य नहीं था। सहयोग करने को जागीरदार संगठन आगे आया। 16 नवम्बर 1905 को जागीरदार संगठन की एक सभा हुई जिसे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अरविन्द घोष, राजा सुबोधचन्द्र मलिक, ब्रजेन्द्र किशोर रायचौधरी आदि ने संबोधित किया। राष्ट्रीय शिक्षा को मूर्तरूप देने के लिए 11 मार्च 1906 को 191/1 बोवबाजार कलकत्ता पर डा. रासबिहारी घोष की अध्यक्षता में ज्योतीय शिक्षा परिषद (National Council of Education, Bengal) का गठन किया गया। यही पर कलकत्ता में राष्ट्रीय महाविद्यालय व विद्यालय स्थापित करने का निर्णय लिया गया। 14 अगस्त 1906 को कलकत्ता के टाउन हाल में एक समारोह आयोजित कर राष्ट्रीय महाविद्यालय व विद्यालय का श्री गणेश किया। संस्था में शिक्षण कार्य 15 अगस्त 1906 की सुबह प्रारम्भ हुआ।

महाविद्यालय से जुड़े सभी लोगों ने अपने अन्य सभी प्रयोजन त्याग दिए थे। अपने सभी प्रयास इस महाविद्यालय को सफल बनाने में लगा दिए। वे इस महाविद्यालय को देश की आत्मा के रूप में देखते थे। एक नये भारत के रूप में देखते थे जिसमें देशवासियों की सभी पीड़ाओं का अन्त होने वाला था। भारत अपने प्राचीन गौरव व महानता के साथ विश्व के सामने प्रकट होने वाला था। शिक्षण का ध्येय विद्यार्थियों को मात्र ऐसी सूचनाएँ देना नहीं था जो उनको बड़ी नौकरी दिला सके या उनको आजीविका उपलब्ध कर सके। यहाँ शिक्षा का ध्येय मातृभूमि के लिए एक ऐसी संतान तैयार करना था, जो देश के लिए कार्य कर सके, देश के लिए कष्ट सह सके।

प्राचार्य अरविन्द द्वारा अशैक्षणिक विधि से जो पढ़ाया जाता वह सीधे विद्यार्थियों के हृदय में उत्तर जाता था। महर्षि अरविन्द की वाणी से विद्यार्थियों की बुद्धि प्रज्वलित हो जाती थी। उनकी कल्पनाशीलता धधकने लगती थी। महर्षि अरविन्द कम से कम पढ़ाने में विश्वास करते थे। आचार्य की उपस्थिति ही प्रेरणादायी होती थी। आचार्य के मृदु मगर गर्म शब्द विद्यार्थियों की अन्तर्रात्मा में ज्योति जला देते थे। महर्षि अरविन्द कहते– ''यदि तुम अध्ययन कर रहे तो देश के लिए, तुम अपने शरीर व मन को प्रशिक्षित कर रहे हो तो देश की सेवा के लिए। तुम्हें आजीविका कमानी है तो केवल इसलिए कि तुम देश की सेवा करने को जीवित रह सको। तुम विदेश जाओगे तो केवल इस लिए कि वहाँ से ज्ञान लाकर देश की सेवा कर सको। तुमको वही काम करना है जिससे देश की समृद्धि हो।'' अरविन्द की इस एक सलाह में वह सब कुछ आ जाता था जो एक देशवासी को सीखना चाहिए है। हमारी परेशानी यह है कि महर्षि अरविन्द का सपना आज भी पूरा नहीं हुआ है। आज भी शिक्षा का ध्येय वही होना चाहिए जो बंगाल राष्ट्रीय महाविद्यालय के संस्थापकों ने तय किया था। महर्षि अरविन्द के बताए मार्ग पर चलने में ही देश की सभी समस्याओं का हल पाया जा सकता है।

स्पष्ट है कि 15 अगस्त की तिथि का ऐतिहासिक संबन्ध देश की स्वतन्त्रता के बजाय देश की शैक्षिक स्वतन्त्रता से अधिक है। परेशानी की बात यह है कि 1905 में देखा गया राष्ट्रीय शिक्षा का सपना अभी पूरा नहीं हुआ। मोदी सरकार ने शिक्षा में बदलाव की आशा जाग्रत की थी मगर अभी तक कुछ खास नहीं हो पाया है। नई शिक्षानीति बनाने के लिए इसरो वैज्ञानिक कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में नई टीम बनाई गई है। शासक दल भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री अमित शाह ने श्यामाप्रसाद मुखर्जी को याद करते हुए शिक्षा को भारतीय मूल्यों पर आधारित करने का आह्वान किया है। आशा है कुछ सार्थक कार्य हो पाएगा। ❑

(सहायक प्रोफेसर, श्री बाँगड़ राज. महाविद्यालय, पाली)

क्रान्तिकारी विचारक महर्षि अरविन्द

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

स्वतन्त्रता दिवस होने के कारण 15 अगस्त की तिथि भारतीय जनजीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है मगर स्वतन्त्रता आन्दोलन के एक प्रमुख नायक महर्षि अरविन्द की जन्मतिथि के रूप में इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। विश्व के प्राचीनतम ज्ञान स्रोत वेदों के अर्थ व विज्ञान के महत्वपूर्ण सिद्धान्त विकासवाद को नई दिशा देने के कारण महर्षि अरविन्द न केवल आज प्रासंगिक हैं अपितु आगे अनुसंधान की आवश्यकता भी प्रतिपादित करते हैं। आधुनिक भारत के इतिहास में अरविन्द का व्यक्तित्व सबसे अलग चमकता दिखाई देता है।

अत्यन्त मेधावी अरविंद के प्रारम्भिक जीवन को देखें तो भगवान महावीर के रूप में विकसित हुए राजकुमार सिद्धार्थ की घटना की पुनरावृति होती प्रतीत होती है। 1872 में कोलकाता के एक बंगाली परिवार में जन्में अरविन्द के पिता जिला शल्य चिकित्सक कृष्णधन घोष पूर्णत: पश्चिमी रंग में रंगे थे। महर्षि अरविंद की माता स्वर्णलता देवी को पश्चिमी सभ्यता के अनुसार रहने को मजबूर करने के बाद पुत्रों को अंग्रेजी रंग में रंगने की पूर्ण तैयारी घोषबाबू ने कर रखी थी। अरविन्द को पाँच वर्ष की अवस्था में यूरोपीय लोगों द्वारा चलाए जा रहे दार्जिलिंग के लोरेटो कॉन्वेंट स्कूल भेज दिया गया। मात्र सात वर्ष भारत में रहने के बाद अरविन्द को उनके भाइयों के साथ इंग्लैण्ड भेज दिया गया। जिस प्रकार राजकुमार सिद्धार्थ को जीवन की वास्तविकताओं से दूर रखने का प्रयास किया गया, उसी प्रकार अरविन्द व उनके भाइयों को एक अंग्रेज पादरी परिवार में रख कर पालन-पोषण की ऐसी व्यवस्था की गई कि उन्हें भारत व भारतीय संस्कृति के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं हो सके।

अंग्रेजों की गुलामी मंजूर नहीं

कृष्णधन घोष अपने बच्चों को आईसीएस अधिकारी बनाना चाहते थे मगर उनके बड़े पुत्रों ने, कठिन चयन परीक्षाओं से डर कर, अन्य विकल्प तय कर लिए। केवल अरविन्द ही प्रतियोगी परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण कर सके। छात्रवृति प्राप्त करने में सफल रहे अरविन्द ने पिता की आर्थिक चिन्ताएं भी दूर कर दी थी। दो वर्ष के परीवीक्षाकाल के पूर्ण होते होते अरविन्द की अन्तर्रात्मा कहने लगी कि वह अंग्रेजों की गुलामी मंजूर नहीं कर सकेगा। परीवीक्षाकाल में सफलता अरविन्द को अंग्रजों की सेवा में पहुँचा देगी और पिता के आग्रह के कारण वे नौकरी से मना भी नहीं कर सकेंगे। अत: घुड़सवारी की परीक्षा में उन्होंने जानबूझ कर इतना बुरा प्रदर्शन किया कि असफल घोषित कर दिये गये।

अरविन्द के एक शुभचिन्तक ने ब्रिटेन में ही इनकी मुलाकात बड़ौदा के राजकुमार सयाजी राव गायकवाड़ से करवा दी थी, बडौदा राज्य की सेवा में भारत आते समय ट्रेवल एजेन्ट द्वारा अरविन्द के जहाज के डूबने की गलत सूचना के सदमें को अरविन्द के पिता सहन नहीं कर सके और काल के गाल में समा गए। गुजरात में आने के बाद अरविन्द ने भारतीय संस्कृति व भारतीय भाषाओं का गम्भीरता से अध्ययन प्रारम्भ किया। इस अध्ययन में व्यस्त हो जाने के कारण अरविन्द अपने राजकीय दायित्व समय पर नहीं निभा पाते थे, अत: राज्य सेवा में उनके विभाग कई बार बदले गए। बाद में उन्हें महाविद्यालय में पढ़ाने को भेज दिया गया। अन्य पदों पर असफल रहे अरविन्द शिक्षक के रूप में बहुत सफल रहे तथा जल्दी उन्हें उपप्राचार्य के पद पर पदोन्नत कर दिया गया।

स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़े

बड़ौदा में रहते हुए अरविन्द भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में रुचि लेने लगे थे। इस बीच इनका विवाह एक सरकारी अधिकारी की पुत्री मृणालिनी देवी से हुआ। बड़ौदा में रह कर अंग्रेजों के विरुद्ध खुल कर कार्य करना सम्भव नहीं था अत: अरविन्द पर्दे के पीछे से कार्य करते थे। वे लोकमान्य तिलक, भगिनी निवेदिता के अतिरिक्त बंगाल व मध्यप्रदेश के क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में रहने लगे। कुछ कुछ अन्तराल पर कोलकाता की यात्रा कर निकट का सम्पर्क भी कर आते थे। अरविन्द ने अपने प्रभाव का उपयोग कर जितेन्द्रनाथ बनर्जी को बड़ौदा की सेना में प्रशिक्षित करवाया तथा उनको बंगाल भिजवाया ताकि वह क्रान्तिकारियों को संगठित व प्रशिक्षित कर सके। बड़ौदा से ही अरविन्द का पहला कविता संग्रह प्रकाशित हुआ। इनके केंब्रिज के साथी के.जी.देशपाण्डे

अरविन्द को एक बार भड़काऊ लेखन व दूसरी बार अलिपुर बम्ब काण्ड में जेल जाना पड़ा था। लार्ड मन्टो की नजर में अंग्रेजी सरकार के लिए सबसे बड़ा खतरा अरविन्द थे। जेल में अरविन्द को कई अलौकिक अनुभव हुए। उनके अनुसार स्वामी विवेकानन्द ने उन्हें आध्यात्मिक कार्य को आगे बढ़ाने की प्रेरणा दी। 1910 में अरविन्द ने राजनीति से संन्यास ले लिया तथा पॉण्डीचेरी में रह कर अध्यात्म पर कार्य करने लगे। अंग्रेजों को इस पर विश्वास नहीं हुआ वे गुप्त से इन पर निरन्तर नजर रखते रहे। ऐसा होना भी स्वाभाविक था क्योंकि बंकिमचन्द्र के आनन्दमठ से अत्यधिक प्रभावित हो अरविन्द ने स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने हेतु संन्यासियों के दल गठित करने की योजना बनाई थी।

ने इन्हें अपने पत्र इन्दुप्रकाश में लिखने को प्रेरित किया तो अरविन्द के अन्तर्मन में छिपी देश प्रेम की भागीरथी शब्द बन प्रवाहित होने लगी। अरविन्द ने समाज की कमजोरी को सही रूप में समझते हुए लिखा कि अंग्रेजी सेना की ताकत नहीं, हमारी वास्तविक दुश्मन तो हमारी कायरता, हमारा स्वार्थीपन, हमारा पाखण्ड तथा अन्धी भावुकता है। अरविन्द के शब्द प्रहारों से राजनीति से जुड़े लोग तिलमिलाने लगे तो संपादक भयभीत हो गए तथा उन्हें राजनैतिक विषयों की बजाय सांस्कृतिक विषयों पर लिखने को कह दिया गया। इसके साथ ही राजनैतिक लेखन में अरविन्द की रुचि समाप्त हो गई। बंगाल विभाजन के बाद अरविन्द कोलकाता आ गए तथा पूर्ण रुचि के साथ आन्दोलन में भाग लेने लगे। अनुशीलन समिति के माध्यम से युवकों को संगठित करने का कार्य किया। कांग्रेस के सूरत अधिवेशन के समय वे पूर्ण रूप से गर्म दल के साथ थे। अरविन्द को एक बार भड़काऊ लेखन व दूसरी बार अलिपुर बम्ब काण्ड में जेल जाना पड़ा था। लार्ड मन्टो की नजर में अंग्रेजी सरकार के लिए सबसे बड़ा खतरा अरविन्द थे। जेल में अरविन्द को कई अलौकिक अनुभव हुए। उनके अनुसार स्वामी विवेकानन्द ने उन्हें आध्यात्मिक कार्य को आगे बढ़ाने की प्रेरणा दी। 1910 में अरविन्द ने राजनीति से संन्यास ले लिया तथा पॉण्डीचेरी में रह कर अध्यात्म पर कार्य करने लगे। अंग्रेजों को इस पर विश्वास नहीं हुआ वे गुप्त से इन पर निरन्तर नजर रखते रहे। ऐसा होना भी स्वाभाविक था क्योंकि बंकिमचन्द्र के आनन्दमठ से अत्यधिक प्रभावित हो अरविन्द ने स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने हेतु संन्यासियों के दल गठित करने की योजना बनाई थी।

योग के साथ प्रयोग

बड़ौदा में रहते हुए अरविन्द नियमित रूप से योग करने लगे थे, योग में उनकी रुचि निरन्तर बढती गई। अरविन्द ने अनुभव किया कि प्रणायाम करने से उनकी स्मरण शक्ति में बहुत सुधार हुआ है। पहले वे जितने समय में कविता की 10-12 पंक्तियाँ भी याद नहीं कर पाते थे प्राणायाम के प्रभाव से उतने ही समय

15 अगस्त 1872 से 5 दिसम्बर 1950

महर्षि अरविन्द का कहना है कि मानव जैव विकास की अन्तिम स्थिति नहीं है अपितु आध्यात्मिक विकास द्वारा महामस्तिष्क युक्त दैवीय स्वरूप में एक नई प्रजाति विकसित हो सकती है।

में 200 पंक्तियाँ आसानी से याद करने लगे थे। कविता लिखने की क्षमता में भी जोरदार सुधार उन्हें दिखाई दिया था। अरविन्द का मानना था कि ईश्वर से एकाकार होना ही योग की पूर्णता है।

अपने शिष्यों को लिखे हजारों पत्रों तथा स्वयं के द्वारा संपादित पत्रिकाओं में लिखे लेखों के माध्यम से अरविन्द ने वेद, उपनिषद्, गीता, भारतीय संस्कृति, विकासवाद का सिद्धान्त आदि पर भरपूर साहित्य रचा है। अरविन्द का लेखन पुरानी बातों को दोहराना मात्र नहीं है अपितु अनेक विषयों पर परम्परा से हट कर सर्वदा नए विचार प्रकट किए हैं। वेदों में की गई देवताओं की स्तुति की निन्दा करते करते हुए गीता में भगवान कृष्ण अर्जुन को कहते है कि वह वेदों का अनुसरण नहीं करें। कई अन्य विद्वान भी वेदों को दुष्ट देवताओं का स्तुतिगान मानते रहे हैं मगर अरविन्द का मानना है कि वेदों की लिखि ऋचाओं के दुहरे अर्थ हैं। सरलार्थ में वे देवताओं की स्तुति करते प्रतीत होते है जबकि भावार्थ आध्यात्मिकता का प्रशिक्षण करते प्रतीत होते हैं। वेदों के विषय में अरविन्द का यह सोच एकदम मौलिक है।

शिक्षा पर कार्य

अरविन्द ने शिक्षा के विकास हेतु बहुत कार्य किया। अरविन्द स्वयं पाश्चात्य शिक्षा पद्धति से शिक्षित हुए मगर वे उस शिक्षा पद्धति को सही नहीं मानते थे। उनका शैक्षिक सोच प्राचीन भारतीय परम्परानुसार ही है। कोलकाता आने के बाद वे राष्ट्रीय शिक्षा परिषद के सदस्य बने तथा सुबोधदत्त मलिक के साथ मिल कर युवकों को शिक्षित करने हेतु राष्ट्रीय महाविद्यालय की स्थापना की। यही कॉलेज आगे चलकर जादवपुर विश्वविद्यालय में विकसित हुआ। प्रधानाचार्य का कार्य करते हुए अरविन्द अपने लेखन व भाषणों से देशवासियों को प्रेरित करते रहे थे। अरविन्द के अनुसार बच्चों को कुछ भी पढ़ाना संभव नहीं अर्थात बाहर से शिक्षार्थी के मस्तिष्क पर कोई बात नहीं थोपी जानी चाहिए। शिक्षा प्रक्रिया द्वारा शिक्षार्थी के मस्तिष्क की क्रिया को सही दिशा दी जानी चाहिए।

विकासवाद की नई व्याख्या

महर्षि अरविन्द का कहना है कि मानव जैव विकास की अन्तिम स्थिति नहीं है अपितु आध्यात्मिक विकास द्वारा महामस्तिष्क युक्त दैवीय स्वरूप में एक नई प्रजाति विकसित हो सकती है। अरविन्द ने डार्विन तथा सांख्य दर्शन में बताए गए विकासवाद के सिद्धान्त को नकारते हुए कहा कि मात्र पदार्थ के विकास की बात सही नहीं है। अरविन्द ने कहा कि आत्मा का विकास महत्वपूर्ण है क्योंकि कि आत्मा के विकास के अनुरूप ही पदार्थ का विकास होता है। आज जब जैव विकास को समझाने में डार्विन के विकासवाद को अपर्याप्त माना जा रहा है, अरविन्द के आत्मा के विकास पर शोध किया जाना चाहिए।

अरविन्द के सार्वजनिक जीवन से अलग होने पर एक विदेशी महिला मीरा अल्फासा ने, जिन्हें अरविन्द ने 'माँ' उपनाम दिया था, अरविन्द के कार्य आगे बढ़ाया। अरविन्द आश्रम तथा पॉण्डीचेरी का बहुदेशीय उपनगर ऑरो-विले आज भी अरविन्द के विचारों का प्रसार कर रहे हैं। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

भारत के शिक्षा तंत्र में घोर अव्यवस्था

❑ डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल

सामान्य रूप से सरकारी और गैरसरकारी (निजी) विद्यालयों के शिक्षण स्तर में जमीन आसमान का अंतर होता है। सरकारी विद्यालयों की कार्यप्रणाली तथा दशा के उदाहरण अनेक हो सकते हैं। यहाँ शिक्षकों की शैक्षणिक कार्यों के अतिरिक्त बहुधा अन्य कार्यों के लिये (जैसे- जनगणना, भांति भांति के सर्वेक्षण आदि) भी ड्यूटी लगा दी जाती है। स्वाभाविक है कि शैक्षणिक कार्य पिछड़ जाता है। आधा सत्र बीतने तक बच्चों की किताबें भी सुलभ नहीं हो पातीं। जो सुलभ होती भी हैं, उनमें अनेक त्रुटियाँ होती हैं। एक नयी रपट के अनुसार कर्नाटक में कक्षा एक से दस तक की पाठ्यपुस्तकों में व्याकरण, वर्तनी एवं तथ्यगत 170 अशुद्धियाँ पायी गयीं और शुद्धिपत्र जारी करना पड़ा। इन्फ्रास्ट्रक्चर के नाम पर बहुधा विद्यालय की चारदीवारी तथा टॉयलेट तक नहीं होते।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति के आधार में वहाँ की शिक्षा व्यवस्था होती है। यह व्यवस्था विशद्, आवश्यकतानुकूल, उच्चतम मानदंडों वाली और जन सामान्य के लिये सर्वसुलभ होनी चाहिये ताकि राष्ट्र में प्रतिभाओं का प्रस्फुटन बेरोकटोक हो सके और इस प्रकार आगे बढ़ने का मार्ग निष्कंटक तथा प्रशस्त बन सके। इसके लिये यह भी आवश्यक है कि सभी के लिये उपलब्ध शिक्षा का गुणात्मक स्तर लगभग समान हो। यदि स्तर में गंभीर असमानतायें और विसंगतियाँ होंगी तो स्पष्टत: मौलिक प्रतिभाओं के धनी तथा उच्चतम कुशलता वाले नागरिकों की उपलब्ध होने वाली संख्या भी कम ही रहेगी जिससे राष्ट्र की प्रगति भी बाधित होगी। यही नहीं, शिक्षा जो राष्ट्र में एकता की वाहक होनी चाहिये, वस्तुत: अनेक प्रकार के विभाजनों का आधार बन कर रह जायेगी।

लेख का प्रारंभ अंतिम बिंदु से ही किया जा सकता है क्योंकि भारत का शिक्षा तंत्र प्रत्येक स्तर पर विसंगतियों से बुरी जकड़ा हुआ है। विसंगतियाँ प्रारंभिक (प्राथमिक से सीनियर सेकेंडरी तक) शिक्षा से ही दिखने लग जाती हैं। उत्तरदायित्व तो यह देश की सरकार का होता है कि वह नागरिकों की पनपती पौध के लिये बिना इस बात का विचार किये कि अभिभावक किस आर्थिक वर्ग से आते हैं, लगभग एक समान प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था करे ताकि नागरिक बनने के बाद उनमें हीन भावना कम से कम उत्पन्न हो और शिक्षित बन कर वे समर्पित भाव से देश की सेवा में अपने अर्जित ज्ञान को अर्पण कर सकें। परंतु भारत में तो प्रारंभिक शिक्षा देने वाले विद्यालयों को ही अनेक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। सरकारी, गैरसरकारी, मातृभाषा माध्यम वाले अथवा अंग्रेजी माध्यम वाले और फिर ये भी अनेक कोटि के। सामान्य रूप से सरकारी और गैरसरकारी (निजी) विद्यालयों के शिक्षण स्तर में जमीन आसमान का अंतर होता है। सरकारी विद्यालयों की कार्यप्रणाली तथा दशा के उदाहरण अनेक हो सकते हैं। यहाँ शिक्षकों की शैक्षणिक कार्यों के अतिरिक्त बहुधा अन्य कार्यों के लिये (जैसे- जनगणना, भांति भांति के सर्वेक्षण आदि) भी ड्यूटी लगा दी जाती है। स्वाभाविक है कि शैक्षणिक कार्य पिछड़ जाता है। आधा सत्र बीतने तक बच्चों की किताबें भी सुलभ

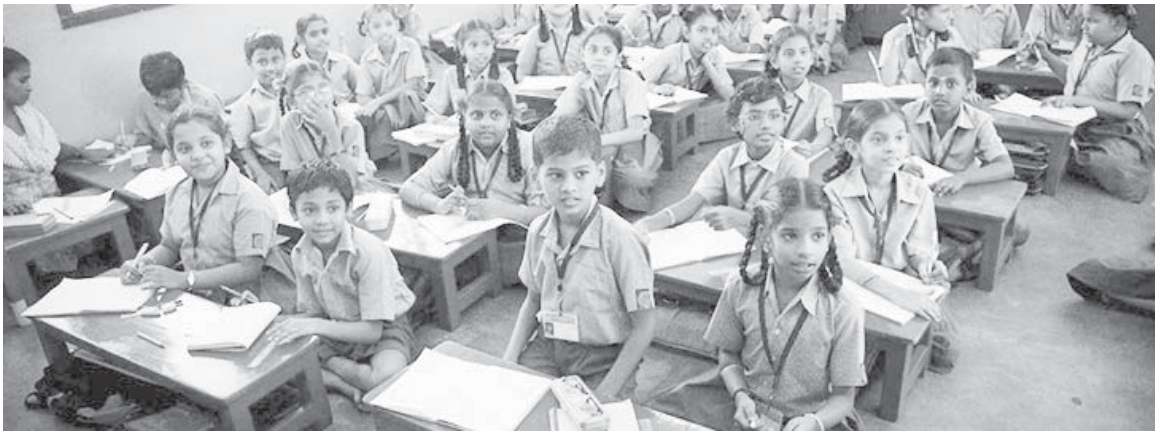

नहीं हो पातीं। जो सुलभ होती भी हैं, उनमें अनेक त्रुटियाँ होती हैं। एक नयी रपट के अनुसार कर्नाटक में कक्षा एक से दस तक की पाठ्यपुस्तकों में व्याकरण, वर्तनी एवं तथ्यगत 170 अशुद्धियाँ पायी गयीं और शुद्धिपत्र जारी करना पड़ा। इन्फ्रास्ट्रक्चर के नाम पर बहुधा विद्यालय की चारदीवारी तथा टॉयलेट तक नहीं होते। शिक्षकों की कमी तो आम शिकायत है ही। इसीलिये अभिभावक यदि अपनी वित्तीय स्थिति के कारण पूरी तरह से विवश न हों तो बच्चे को गैरसरकारी (निजी) विद्यालय में ही प्रवेश दिलवाने का प्रयत्न करते हैं। हरियाणा में इसी कारणवश सरकारी विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या निरंतर घटती जा रही है। वर्ष 2014-15 में पहली से पाँचवी तक के विद्यार्थियों की कुल संख्या लगभग 12 लाख थी जो 2016-17 में क्रमशः घट कर नौ लाख पचास हजार रह गई। इस परिस्थिति के कारण वहाँ 169 प्राथमिक और आगे सीनियर सेकेंडरी तक 574 विद्यालयों को बंद कर देना पड़ा (देखिये अमर उजाला 20 जुलाई 2017)। यह स्थिति गाँव और शहर के मध्य भी एक मोटी विभाजन रेखा खींच देती है। सरकार इस विसंगति से परिचित भी है और इसीलिये उसने इस कमी को पूरा करने के लिये केन्द्रीय एवं नवोदय विद्यालयों की स्थापना की है। परंतु इन विद्यालयों की अपर्याप्त संख्या के कारण वे प्रारंभिक शिक्षण विद्यालयों का एक अन्य वर्ग भर बन कर रह गये हैं।

प्रारंभिक शिक्षार्थियों के मध्य दूसरी विसंगति माध्यम से उत्पन्न होती है। कहना न होगा कि सरकारी विद्यालय तक शिक्षण माध्यम के आधार पर बँटे हुये हैं। यहाँ भी अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यार्थी में श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न होता ही है। यह एक ऐसा मापदंड है जो विद्यार्थी समुदाय को ऊपर से नीचे तक लंबवत विभाजित कर देता है और सच पूछिये तो भविष्य में नागरिक जीवन को भी प्रारंभ से अंत तक प्रभावित करता है।

प्रारंभिक शिक्षा की विसंगतियाँ यहीं समाप्त नहीं होती। आगे चलें तो दिखाई पड़ता है कि निजी विद्यालय भी एक प्रकार के नहीं हैं। माध्यम संबंधी असमानता के साथ ही उनमें गुणवत्ता संबंधी भारी अंतर भी है। मोटे तौर पर एक ओर सामान्य निजी विद्यालय तथा दूसरी ओर अति प्रतिष्ठित तथा अति खर्चीले विद्यालय, जैसे शिव नाडार, श्रीराम ग्लोबल, दिल्ली पब्लिक स्कूल, गोयनका पब्लिक स्कूल तथा बिड़ला पब्लिक स्कूल आदि हैं जो शृंखला रूप में अनेक नगरों में चल रहे हैं। इनकी प्रतिष्ठा के कारण इनमें प्रवेश के लिये अभिभावकों में आपाधापी मची रहती है। इनकी शिक्षा भविष्य में अच्छी नौकरी की गारंटी समझी जाती है। इन दोनों कोटि के मध्य भी विद्यालयों के अन्य वर्गों का एक पूरा स्पेक्ट्रम उपस्थित होता है जिस पर अधिक विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं है।

यह तो हुई प्रारंभिक विद्यालयों की बात। इसके आगे उच्चतर शिक्षा तंत्र भी विसंगति के रोग से अछूता नहीं है। विश्वविद्यालयों को ही लें तो पता चलेगा कि कम से कम चार प्रकार के ऐसे प्रतिष्ठान हैं- केन्द्रीय, राज्यीय, डीम्ड एवं निजी। केन्द्रीय और राज्यीय तो समझ आते हैं परंतु डीम्ड वर्ग की आवश्यकता क्यों हुई - यह समझ से परे है। उन्हें स्तर के आधार पर या तो सम्पूर्ण विश्वविद्यालय का दर्जा दे दिया जाता या फिर महाविद्यालयों की श्रेणी में सम्मिलित किया जा सकता था। स्मरणीय है कि ये डीम्ड विश्वविद्यालय निजी और सरकारी, दोनों ही प्रकार के हैं। इस समय इनकी कुल संख्या 158 है जिसमें 35 सरकारी हैं। सभी प्रकार के निजी विश्वविद्यालयों में कुछ को छोड़कर अन्य उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में केवल Also ran वाली भूमिका अदा कर रहे हैं। अनुदान आयोग की मान्यता बनाये रखने के लिये वे अधिकतर पहले दो वर्ग के विश्वविद्यालयों से सेवानिवृत्त (और काफी सीमा तक चुक चुके) प्रोफेसरों के सहारे अपना धंधा चला रहे हैं। कहना न होगा कि उनमें शोध सक्रियता का नितांत अभाव होता है और इस प्रकार वे केवल डिग्री वितरित करने वाली मशीन बन कर

रह जाते हैं।

स्तरीय विश्वविद्यालय को कार्यरत रखने के लिये जिस धनराशि की आवश्यकता होती है, वह तो पहले तीन कोटि के प्रतिष्ठानों को भी उपलब्ध नहीं है। अभी मई 2017 के 'द हिंदू' के अंक में लिखते हुये NCERT के पूर्व निदेशक कृष्ण कुमार जी ने दु:ख प्रकट किया कि केन्द्रीय और राज्यीय, दोनों कोटि के विश्वविद्यालयों को पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं कराया जा रहा है जिसके कारण उनमें शोध कार्य लंगड़ा कर ही चल पा रहा है। धन के ही कारण प्रोफेसरों की नियुक्तियाँ भी लंबे समय तक नहीं हो पातीं। राज्य सरकारें केवल सस्ती लोकप्रियता के लिये बड़ी संख्या में विश्वविद्यालय तो स्थापित करती चली जाती हैं यद्यपि उन्हें स्तरीय बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया जाता। कई बार तो केवल मुख्य द्वार पर लगे बोर्ड से ही महाविद्यालयों से उनकी भिन्नता सिद्ध हो पाती है। केन्द्रीय प्रतिष्ठान भी बहुधा ऐसे दुरूह से स्थान पर स्थापित कर दिये जाते हैं कि योग्य प्रोफेसर वहाँ जाना ही पसंद नहीं करते। वस्तुत: इन्फ्रास्ट्रक्चर संबंधी सुविधाओं की दृष्टि से चारों कोटि के प्रतिष्ठानों में भारी अंतर है। इन्हीं कारणों से उनकी प्रतिष्ठा और प्रशिक्षण के पश्चात् बाहर आने वाले विद्यार्थियों की योग्यता और इसीलिये नौकरी पाने की उनकी संभावनाओं में भी भारी असमानतायें होती हैं। दृष्टव्य है कि कमोबेश यही स्थिति तकनीकी प्रशिक्षण देने वाले प्रतिष्ठानों की भी है।

इन विसंगतियों के अतिरिक्त भी अनेकों प्रकार की विकृतियाँ शिक्षा तंत्र में हैं जो राष्ट्र को इस स्रोत से पर्याप्त शक्ति ग्रहण करने के मार्ग में बाधक हो रही हैं। पहली समस्या तो, विशेषकर उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं तकनीकी प्रशिक्षण प्रतिष्ठानों की संख्या के माँग के अनुरूप न होने की ही है। दोनों में विशाल अंतर है। केन्द्र की योजना वर्ष 2020 तक युवा आबादी के कम से कम 30 प्रतिशत को उच्चतर शिक्षा में प्रवेश देने की है। परंतु इसके लिये लगभग 400 लाख स्थानों (सीटों) की उपलब्धता होनी चाहिये। आज ही प्रवेश के लिये विद्यार्थी को एड़ी चोटी का जोर लगाना पड़ता है, फिर 2020 में क्या होगा जब प्रवेशार्थियों की संख्या में भारी वृद्धि संभावित है। इसके लिये जिस मात्रा में धन की आवश्यकता होगी, उसकी उपलब्धता स्वयं में एक महती समस्या होगी।

दूसरी बड़ी समस्या जो मुख्यत: प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में पहले व्याख्यायित विसंगतियों से ही जन्मी है, कोचिंग की है। सामान्य विद्यालयों के शिक्षण स्तर में भारी गिरावट के कारण कोचिंग की बीमारी का प्रारंभ हुआ। अब तो स्थिति यह है कि विद्यालयों में कक्षायें अधिक से अधिक Non-Attending बनती जा रही हैं और विद्यार्थी, अभिभावकों की पर्याप्त सहमति से कोचिंग की ओर भाग रहे हैं। एक अजीब सा फैशन चल पड़ा है कक्षा में न रहने का परंतु बाहर पढ़ने का। कभी कभी तो अभिभावक अपने बच्चों को दिल्ली, भोपाल, कोटा व चंडीगढ़ जैसे दूरदराज के स्थानों तक कोचिंग के लिये भेजने में तनिक भी संकोच नहीं करते।

कोचिंग के उपरान्त भी विद्यार्थियों में गुणवत्ताहीनता बड़े स्तर पर देखी जा रही है। इसके अनेक कारण हैं। अनेक राज्यों में अभी तक 8वीं कक्षा तक किसी को भी अनुत्तीर्ण न घोषित करने की प्रथा है यद्यपि केन्द्र सरकार इसके विरुद्ध अपना मत प्रकट कर चुकी है। परिणाम है कि सामान्य विद्यार्थी में अध्ययन की प्रवृत्ति कम से कमतर होती जा रही है। फलस्वरूप 8वीं के आगे उत्तीर्ण होने के लिये उन्हें नकल देवी की शरण में जाना पड़ता है। बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा के राज्य इस नकल की प्रवृत्ति के जीते जागते शर्मनाक उदाहरण हैं। अभी कुछ समय पूर्व ही हरियाणा में कुछेक विद्यार्थी संगठनों ने स्वयं इस प्रथा की समाप्ति की माँग की जो स्वागत योग्य है।

प्रारंभिक ज्ञान के स्तर में यह गिरावट आगे भी अनेक विकृतियों को जन्म दे चुकी है। उदाहरण दिये जा सकते हैं। महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक में अभी तक यह व्यवस्था थी कि स्नातक तथा स्नातकोत्तर कक्षाओं में एक सेमेस्टर में कम से कम 50 प्रतिशत प्रश्नपत्रों में उत्तीर्ण होने पर ही अगले में प्रवेश मिलता था। परंतु इस वर्ष यह शर्त हटा दी गई क्योंकि छात्रों के लिये उसे पूरी करना एक चुनौती बनता जा रहा था। व्यवस्था तो है कि मेडिकल एवं इंजीनियरिंग कॉलेजों में प्रवेश के लिये अखिल भारतीय NEET एवं JEE परीक्षाओं में ऊँची Rank प्राप्त की जाय। परंतु तमिलनाडु के विद्यार्थियों के लिये यह अत्यंत भारी शर्त सिद्ध हुई। अत: वहाँ की सरकार ने निर्णय किया है कि उनके कॉलेजों में 85 प्रतिशत सीटों पर प्रवेश तमिलनाडु के अपने सेकेंडरी बोर्ड की 12वीं की परीक्षा के अंकों के आधार पर दिया जायेगा। और तो और, अनुदान आयोग ने भी निर्णय लिया है कि नेट परीक्षा में कम से कम 6 प्रतिशत को उत्तीर्ण अवश्य घोषित किया जाय। अभी तक यह प्रतिशत मुश्किल से साढ़े चार का स्तर ही छू पाता था। ये उदाहरण सिद्ध करते हैं कि विद्यार्थियों के ज्ञान के स्तर में चिंताजनक गिरावट हो रही है। निश्चय ही ये निर्णय शिक्षा तंत्र में बढ़ती विकृतियाँ रेखांकित कर रहे हैं।

भारत का शिक्षा तंत्र घोर अव्यवस्था का शिकार होता जा रहा है। उसमें इतने छिद्र बनते जा रहे हैं कि उसकी असली पहचान लुप्त होने के कगार पर है। यदि इस क्षरण पर लगाम न लगाई गई तो परिणाम विनाशकारी होंगे।❑

(पूर्व सदस्य केन्द्रीय हिन्दी समिति, भारत सरकार)

रुक्टा (राष्ट्रीय) द्वारा आयोजित हुए गुरु वन्दन कार्यक्रम

राजकीय डूंगर महाविद्यालय बीकानेर में आयोजित गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के रूप में रा. स्व. संघ के क्षेत्रीय प्रचारक श्री दुर्गादास जी का पाथेय तथा स्वामी संवित सोमगिरिजी महाराज का आशीर्वचन प्राप्त हुआ। श्री दुर्गादास जी ने गुरु महिमा का बखान करते हुए माता-पिता, लौकिक व आध्यात्मिक ज्ञान देने वाले आचार्य एवं राष्ट्र रूपी समाज को गुरु व देव तुल्य बताया। उन्होंने बताया कि गुरु शिष्य को आँख (अच्छा दृष्टिकोण) लाख (अच्छा लक्ष्य), पाँख (परिश्रम), साख (यश) एवं राख (अहंकार का नाश) देता है। स्वामी संवित सोमगिरिजी ने शिक्षकों से अपनी सीमा से परे जाकर भी समाज के नवनिर्माण में विशेष भूमिका निभाने का आह्वान किया। रुक्टा (राष्ट्रीय) के प्रांतीय अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह ने संगठन की गतिविधियों एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए गुरुवंदन कार्यक्रम का विषय प्रवर्तन किया। संचालन डॉ. उज्ज्वल गोस्वामी ने किया।

राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय में आयोजित गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्यवक्ता राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के क्षेत्रीय कार्यवाह श्री हनुमानसिंह का पाथेय प्राप्त हुआ। उन्होंने प्रत्येक शिक्षक में व्याप्त गुरुतत्व की की मीमांसा करते हुए गुरु शिष्य परम्परा की सनातन अवधारणा पर प्रकाश डाला और नवीन परिप्रेक्ष्य में समसामयिक तथा राष्ट्रगौरव का भाव जगाने वाली शिक्षा के सूत्रधार बनने का आह्वान उन्होंने शिक्षकों से किया।

राजकीय महाविद्यालय जोधपुर में आयोजित गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए रा. स्व. संघ के क्षेत्रीय बौद्धिक शिक्षण प्रमुख श्री कैलाशचन्द्र ने शिक्षक को समाज का दर्पण बताते हुए भावी भारत का निर्माता बताया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य श्री रमेशचन्द्र गहलोत ने की।

सीकर में चारों राजकीय महाविद्यालयों के संयुक्त गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में रा. स्व. संघ के जयपुर प्रांत प्रचारक श्री निम्बाराम का पाथेय प्राप्त हुआ। श्री निम्बाराम ने जीवन में माता-पिता और गुरु का महत्व रेखांकित करते हुए व्यक्ति के निर्माण में उनकी सर्वोपरि भूमिका बताई। संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट, विभाग अध्यक्ष डॉ. भूपेन्द्र दूलड़ एवं चारों महाविद्यालयों के प्राचार्य सहित बड़ी संख्या में शिक्षक एवं महाविद्यालय के विद्यार्थी उपस्थित थे।

दौसा के तीनों राजकीय (कला, वाणिज्य व विज्ञान) महाविद्यालयों ने संयुक्त गुरुवंदन कार्यक्रम का आयोजन किया। इस कार्यक्रम के मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष डॉ. विमलप्रसाद अग्रवाल ने कहा कि अच्छे शिक्षक के लिए अपने विषय का उत्कृष्ट ज्ञान और विद्यार्थियों के साथ आत्मीय व्यवहार होना आवश्यक है। विशिष्ठ अतिथि डॉ. ओ. पी. गुप्ता, पूर्व विशेषाधिकारी-उच्च शिक्षा रहे। इस अवसर पर तीनों महाविद्यालयों के प्राचार्य डॉ. डी. के. मोदानी, डा. प्रेमसिंह और श्री लालचन्द जैन उपस्थित रहे। संचालन डॉ. शिवशरण कौशिक ने किया।

राजकीय महाविद्यालय केकड़ी इकाई द्वारा आयोजित कार्यक्रम में मुख्य वक्ता रा. स्व संघ के क्षेत्रीय कार्यकारिणी सदस्य प्रो. पुरुषोत्तम परांजपे ने कहा कि अंतरिक्ष एजेन्सी नासा ने भी गुरु पूर्णिमा की महत्ता को स्वीकार किया है। उन्होंने भारतीय गुरु परम्परा के आलोक में कर्मपथ तय करने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. राजकुमारी राणावत ने, संचालन डॉ. अनिता रायसिंघानी व धन्यवाद ज्ञापन डॉ. पवन चंचल ने किया। कोटा विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ एवं रुक्टा (राष्ट्रीय) इकाई द्वारा आयोजित गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्यवक्ता संगठन महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता रहे। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि कुलपति प्रो. परमेन्द्र दशोरा ने गुरु को गुरूर से दूर रहते हुए श्रेष्ठ नागरिक निर्माण में अपनी भूमिका निभाने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता शैक्षिक संघ की अध्यक्ष प्रो. आशुरानी ने की तथा धन्यवाद इकाई सचिव श्री अन्ना कौशिक ने व्यक्त किया। राजकीय विधि महाविद्यालय, अजमेर में गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्य वक्तव्य पूर्व प्राचार्य डॉ. राधेश्याम अग्रवाल का रहा। इकाई सचिव प्रो. रामचरण मीना ने कार्यक्रम का संचालन किया।

राजकीय महाविद्यालय सरवाड़ में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष श्री बजरंग प्रसाद मजेजी ने वैदिक परम्परा का स्मरण कराते हुए गुरु शिष्य के आत्मीय संबंधों की चर्चा की तथा महर्षि वेदव्यास को आदि गुरु बताते हुए अनेक उपाख्यानों द्वारा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु गुरु के महत्व का विवेचन किया।

गोविन्द गुरु राजकीय महाविद्यालय बांसवाड़ा इकाई द्वारा आयोजित में मुख्यवक्ता डॉ. महिपालसिंह राव ने शिक्षक एवं विद्यार्थी के मध्य आई दूरी पर चिंता व्यक्त करते हुए शिक्षक को गुरु बनने की आवश्यकता पर बल दिया। मुख्य अतिथि डॉ. डी. के. जैन ने कहा कि गूगल सूचनाएँ तो दे सकता है किन्तु उसे परिष्कृत रूप से स्वीकार्य बनाना गुरु द्वारा ही संभव है। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो. दर्शन अछपाल ने की, आभार प्रदर्शन डॉ. नरेन्द्र पानेरी ने किया। राजकीय महाविद्यालय खेतड़ी में आयोजित गुरुवंदन कार्यक्रम के मुख्य अतिथि रामकृष्ण मिशन के सचिव स्वामी आत्मानिष्ठानंदजी ने कहा कि गुरु मात्र शिक्षा प्रदान करने वाला ही नहीं विद्यार्थी के जीवन को सम्पूर्ण विकसित करने वाला होना चाहिए। कार्यक्रम का संचालन डॉ. अवतार कृष्ण शर्मा ने किया। आभार डॉ. अनिता मोदी ने व्यक्त किया।

राजकीय महाविद्यालय किशनगढ़ में गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्य वक्ता विद्या भारती के प्रांत संगठन मंत्री श्री गोविन्द रहे। उन्होंने शिक्षा में संस्कारों के समावेश की बात रखते हुए गुरु के सम्मान को रेखांकित किया। कार्यक्रम में सहसंगठन मंत्री डॉ. सुशील कुमार बिस्सू, डॉ. आर. पी. शर्मा ने भी विचार व्यक्त किये।

राजकीय कन्या महाविद्यालय नाथद्वारा में गुरुवंदन कार्यक्रम के अन्तर्गत विचार गोष्ठी आयोजित की गई। गोष्ठी का संचालन इकाई सचिव प्रो. सागर सांवरिया ने किया। एम.एस. कॉलेज बीकानेर में गुरुवंदन कार्यक्रम के अवसर पर स्वामी संवित सोमगिरीजी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। कार्यक्रम में संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह भी उपस्थित रहे। राजकीय महाविद्यालय धौलपुर में मुख्यवक्ता

श्री विशम्भर दयाल शर्मा ने गुरु शिष्य परम्परा पर प्रकाश डालते हुए गुरु को चन्द्रमा की तरह शीतल रहकर शिक्षक के प्रकाश रूपी ज्ञान से समाज का कल्याण करने की बात कही। कार्यक्रम का संचालन डॉ. श्यामकुमार मीणा ने किया तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. गिर्राज सिंह मीणा ने किया। नई मंडी, घड़साना में निजी महाविद्यालय का सामूहिक गुरुवंदन कार्यक्रम प्रदेश उपाध्यक्ष डॉ. सत्यनारायण शर्मा के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। राजकीय कन्या महाविद्यालय शाहपुरा में आयोजित कार्यक्रम में डॉ. अल्काकुमार एवं डॉ. एस. डी. गुप्ता ने भारतीय गुरु परम्परा पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान समय में इसके महत्व को समझाया। अध्यक्षता प्राचार्य अनामिका सिंह एवं संचालन इकाई सचिव डॉ. गीता गर्ग ने किया।

राजकीय महाविद्यालय नसीराबाद में प्राचार्य डॉ. कल्पना गौड़ की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए कार्यक्रम में मुख्य वक्ता प्रचार प्रकोष्ठ के सहसंयोजक डॉ. अनिल दाधीच रहे। विषय प्रवर्तन प्रो. अनिल गुप्ता ने, संचालन डॉ. गजेन्द्र मोहन ने एवं धन्यवाद ज्ञापन प्रो. संजय कनौजिया ने किया। कोटा के विज्ञान एवं कला राजकीय महाविद्यालयों के संयुक्त गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्य अतिथि राजस्थान तकनीकी विश्वविद्यालय कोटा के कुलपति प्रो. एन. पी. कौशिक रहे। कार्यक्रम के मुख्यवक्ता के रूप में डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल का पाथेय मिला। संचालन डॉ. गीताराम शर्मा ने किया। आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा, राजकीय महाविद्यालय जयपुर, संगीत संस्थान एवं स्कूल ऑफ आर्ट्स जयपुर द्वारा आयोजित गुरुवंदन के संयुक्त कार्यक्रम में डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए शिक्षक समुदाय से बदलते सामाजिक परिदृश्य में स्वयं को परिष्कृत करने, शिक्षा के नवीनतम आयामों पर दृष्टि रखने तथा राष्ट्रीयता का भाव जगाने वाली शिक्षण पद्धति अपनाने पर बल दिया। उन्होंने शिक्षकों से केवल स्वयं को वेतन भोगी मानने के स्थान पर स्वयं को गुरुतत्व का संवाहक बन कार्य करने का मंत्र दिया।

अलवर में चारों महाविद्यालयों (राजर्षि, जी.डी. कला एवं वाणिज्य) के संयुक्त आयोजन में मुख्यवक्ता रा. स्व. संघ के प्रांत सेवा प्रमुख श्री सूर्य प्रकाश रहे। उन्होंने गुरु की महिमा पर प्रकाश डालते हुए गुरु को वर्ण मुक्त व वर्ग मुक्त होने का विचार रेखांकित किया। कार्यक्रम में प्रान्तीय कार्यकारिणी सदस्य डॉ. ऋतु गुप्ता, विभाग अध्यक्ष डॉ. करमवीरसिंह, विभाग सचिव डॉ. अजय शर्मा, रा. स्व. संघ के विभाग कार्यवाह श्री अशोक गुप्ता, सहसचिव डॉ. धनंजय सिंह, विभाग महिला प्रतिनिधि डॉ. हेमा देवरानी सभी इकाई सचिव एवं महिला प्रतिनिधियों सहित अनेक शिक्षकों ने भाग लिया। कार्यक्रम में विषय प्रवर्तन प्रांतीय संयुक्तमंत्री डॉ. गंगाश्याम गुर्जर ने, अतिथि परिचय डॉ. राजेश गुप्ता एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. महेन्द्र जाट ने किया। संचालन डॉ. लता शर्मा ने किया।

चिमनपुरा में दोनों राजकीय महाविद्यालयों के संयुक्त गुरुवंदन कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए रुक्टा (राष्ट्रीय) के संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने सनातन गुरु शिष्य परम्परा का स्मरण अनेक आख्यानों द्वारा कराते हुए आत्मावलोकन कर स्वयं को उदात्त गुरु के रूप में स्थापित करने का आह्वान किया। आभार प्रदेश उपाध्यक्ष डॉ. सरस्वती मित्तल ने किया।

कोटपूतली में आयोजित कार्यक्रम में मुख्यवक्ता डॉ. एम. पी. कुमावत ने गुरु शिष्य परम्परा व गुरु पूर्णिमा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए पौराणिक कथाओं के माध्यम से गुरु की महिमा प्रतिपादित की। संचालन डॉ. संगीता सिन्हा ने किया।

राजकीय महाविद्यालय चूरू में आयोजित कार्यक्रम में प्रो. कमलसिंह कोठारी ने कहा कि गुरु समाज को आदर्श स्थिति की ओर ले जाता है, गुरु अपने शिष्य को अंधकार से प्रकाश का मार्ग दर्शाता है। इस अवसर पर प्रो. भवानीशंकर शर्मा एवं प्रो. सरोज हारित ने भी विचार व्यक्त किये। संभाग संगठन मंत्री डॉ. सुरेन्द्र डी. सोनी ने संगठन की नीति-रीति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि सच्चा संगठन वह होता है जो अपने सदस्यों को आत्मचिंतन के लिए प्रेरित करे।

श्रीगंगानगर में दोनों राजकीय महाविद्यालयों के अलग-अलग आयोजित कार्यक्रम में रुक्टा (राष्ट्रीय) के प्रदेश महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए शिक्षकों से स्वयं के भीतर विद्यमान गुरुतत्व को पहचानने का आह्वान किया। कार्यक्रम में विभाग अध्यक्ष डॉ. रामसिंह राजावत, प्रदेश उपाध्यक्ष डॉ. सत्यनारायण शर्मा एवं विभाग सहसचिव डॉ. श्यामलाल ने भी विचार व्यक्त किये।

राजकीय महाविद्यालय गंगापुर सिटी में संगठन महामंत्री श्री नारायण लाल गुप्ता ने मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए भारतीय गुरु शिष्य परम्परा के सनातन तत्व पर चिंतन-मनन करते हुए वर्तमान की चुनौतियों पर शिक्षकों को सजग होकर राष्ट्र निर्माणकारी शिक्षण पद्धति अपनाने का आह्वान किया। कार्यक्रम में प्रो. पृथ्वीराज मीणा, विभाग अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र शर्मा, विभाग सचिव डॉ. पुरुषोतम सिंह, विभाग सह सचिव डॉ. विजेन्द्रसिंह का सक्रिय सहभाग रहा।

राजकीय महाविद्यालय, सरदारशहर में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए रुक्टा (राष्ट्रीय) के अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह ने गुरु के महत्त्व को रेखांकित किया। प्राचीन

रुक्टा (राष्ट्रीय) का सदस्यता अभियान सम्पन्न

रुक्टा (राष्ट्रीय) के वार्षिक सदस्यता अभियान के अन्तर्गत 1 से 15 जुलाई 2017 तक सदस्यता एकत्रित की गई। राज्य के सभी विश्वविद्यालयों, राजकीय एवं निजी महाविद्यालयों में कार्यकर्ताओं द्वारा व्यक्तिगत सम्पर्क कर सदस्यता प्राप्त की। 1 जुलाई 2017 को अकादमिक सत्र के प्रथम दिवस पर एक ही दिन में 4151 शिक्षकों ने संगठन की वार्षिक सदस्यता ग्रहण की। इस वर्ष अभियांत्रिकी, संस्कृत शिक्षा सहित उच्च शिक्षा के अन्य क्षेत्रों में भी प्रदेश कार्यकारिणी के निर्णायानुसार सदस्यता ली गई। पिछले कई वर्षों से राजकीय महाविद्यालयों के लगभग 95 प्रतिशत से अधिक शिक्षकों की सदस्यता के साथ रुक्टा (राष्ट्रीय) राज्य की उच्च शिक्षा में एक मात्र प्रभावी संगठन है जो शिक्षा एवं शिक्षक हितों में निरन्तर कार्यरत है। उल्लेखनीय है कि पिछले कुछ वर्षों से संगठन वार्षिक सदस्यता अभियान मात्र 15 दिन में सम्पन्न करता है जिससे वर्ष भर सांगठनिक-वैचारिक-रचनात्मक गतिविधियों में संगठन की ऊर्जा लग पाती है।

वाङ्मय से उनके प्रेरक प्रसंगों द्वारा गुरु शिष्य संबंधों पर प्रकाश डालते हुए डॉ. दिग्विजयसिंह ने शिक्षकों से व्यक्ति निर्माण, चरित्र निर्माण और राष्ट्रीय निर्माण में स्वयं की भूमिका गढ़ने की बात रखी। विषय प्रवर्तन डॉ. देवीशंकर शर्मा ने किया।

राजकीय महाविद्यालय अजमेर में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए एम. डी. एस. विश्वविद्यालय अजमेर के कुलपति प्रो. कैलाश सोडानी ने कहा कि शिक्षक चाणक्य जैसे दृष्टा होते हैं तथा उन्हें अपनी शक्ति व जिम्मेदारी को समझते हुए समाज को बदलने में सशक्त भूमिका निभानी चाहिए। डॉ. नारायणलाल गुप्ता ने विषय प्रवर्तन करते हुए शिक्षकों को राष्ट्र विरोधी तत्वों से सावधान रहने तथा जे.एन.यू. व जाधवपुर विश्वविद्यालय में लगे राष्ट्रविरोधी नारों जैसी घटनाओं के प्रति भावी पीढ़ी को सही दृष्टिकोण दे कर अपने भीतर के गुरुतत्व को राष्ट्र निर्माण हेतु सदा सजग बनाए रखने का आह्वान किया। संचालन डॉ. अनिल दाधीच ने किया।

राजकीय महाविद्यालय बहरोड़, तिजारा एवं किशनगढ़वास ने प्रदेश संयुक्त मंत्री डॉ. गंगाश्याम गुर्जर एवं विभाग अध्यक्ष डॉ. करमवीर ने उद्बोधन दिया। राजकीय महाविद्यालय कपासन में रा. स्व संघ के जिला कार्यवाह श्री दिनेश भट्ट मुख्यवक्ता रहे। बांगड़ महाविद्यालय पाली में मुख्यवक्ता डॉ. कमलेश गगड़ रहे। संचालन डॉ. दीप्ति चतुर्वेदी ने किया।

राजकीय महाविद्यालय राजगढ़ (अलवर) में मुख्यवक्ता विभाग अध्यक्ष डॉ. करमवीर रहे। संचालन इकाई सचिव डॉ. वी. के. सिंह ने किया। राजकीय महाविद्यालय बिलाड़ा में शिक्षाविद् श्री दलपतसिंह का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। संचालन डॉ. ईश्वरचन्द शर्मा ने किया। राजकीय महाविद्यालय अनूपगढ़ में आयोजित कार्यक्रम में मुख्य अतिथि डॉ. आर.जी. शर्मा, विशिष्ट अतिथि डॉ. प्रतापसिंह शेखावत, श्री मनोजकुमार एवं डॉ. सुरेन्द्रसिंह का उद्बोधन प्राप्त हुआ। प्राचार्य डॉ. एस. एन. शर्मा ने अध्यक्षता की। राजकीय महाविद्यालय सुमेरपुर में रा. स्व. संघ के जिला कार्यवाह श्री विजेन्द्र मुख्य वक्ता रहे। प्राचार्य डॉ. विनोदकुमार दवे ने अध्यक्षता की। इकाई सचिव डॉ. ओ. पी. शर्मा ने विषय प्रवर्तन किया।

राजकीय महाविद्यालय बारां में रा. स्व. संघ के जिला प्रचारक श्री अंकित का उद्बोधन हुआ। राजकीय महाविद्यालय ओसियां में राजस्थानी भाषाविद् डॉ. राजेन्द्र सिंह बारेठ का पाथेय मुख्यवक्ता के रूप में प्राप्त हुआ। इकाई सचिव उम्मेदसिंह ने विषय प्रवर्तन किया। रुक्टा (राष्ट्रीय) के संभाग संगठन मंत्री डॉ. हरिसिंह राजपुरोहित ने भी वक्तव्य दिया।

सिरोही में स्थित तीनों राजकीय महाविद्यालयों द्वारा संयुक्त आयोजन में मुख्यवक्ता सेवानिवृत प्राचार्य डॉ. वी. के. त्रिवेदी रहे। विषय प्रवर्तन संभाग संगठन मंत्री डॉ. हरिसिंह राजपुरोहित ने किया। विशिष्ट अतिथि डॉ. रेखा राणावत रही एवं अध्यक्षता डॉ. कमला बंधु ने की। राजकीय महाविद्यालय सांभरलेक में संत श्री रमणनाथ जी महाराज ने मुख्यवक्ता के रूप में उद्बोधन किया।

इसके अलावा राजकीय महाविद्यालय डूंगरपुर, कन्या भरतपुर, सवाईमाधोपुर, शिवगंज, ब्यावर, भीम, नाथद्वारा, नोहर, एम.एस.जे. भरतपुर, कन्या अजमेर, बून्दी, पुष्कर, कन्या बून्दी, कन्या चौमू एवं श्रीकरणपुर सहित कुल 118 इकाइयों में शिक्षा जगत एवं समाज के अग्रणी विचारक-चिंतक प्रबुद्धजनों के सान्निध्य में गुरुवंदन कार्यक्रम सम्पन्न किये गये। ❑

श्रद्धांजलि

अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय सचिव, उपाध्यक्ष तथा आन्ध्र प्रदेश उपाध्याय संघ के प्रदेश अध्यक्ष जैसे विभिन्न दायित्वों का ठीक से निर्वहन करने वाले, सदा ही कार्यकर्ताओं को प्रेरित करने वाले श्री तडवर्ती सुब्बाराव ने अपनी लौकिक यात्रा पूर्ण कर प्रभु श्रीचरणों में समा गए।

स्व. टी. सुब्बाराव ने आन्ध्रप्रदेश में शिक्षकों में राष्ट्रीय विचार वृद्धि के लिए आन्ध्रप्रदेश उपाध्याय संघ के माध्यम से सम्पूर्ण प्रदेश में प्रवास कर संगठन को सुदृढ़ता प्रदान की। उनके आत्मीय व्यवहार से सभी उनके निकट हो जाते थे। एक मास पूर्व अल्प हृदयाघात की चिकित्सा लेकर परिवार में सकुशल ही थे। अचानक 17 जुलाई 2017 को पुनः हुए हृदयाघात से वे अपनी अन्तिम यात्रा पूर्ण कर अनन्त में विलिन हो गए। अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के देशभर के सभी कार्यकर्ता उन्हें सादर श्रृद्धांजलि अर्पित करते हैं, प्रभु उन्हें मोक्ष प्रदान करे।

रायपुर में सम्पन्न हुआ गुरुवन्दन कार्यक्रम

शा. पीजी कॉलेज में महाविद्यालय के ग्रंथालय भवन के ऊपर हॉल में गुरुपूर्णिमा के अवसर पर गुरुवन्दन कार्यक्रम मनाया गया। सर्व प्रथम महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. चन्द्रशेखर चौबे, कन्या महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. एस. के. चटर्जी एवं महाविद्यालय के समस्त प्राध्यापकों द्वारा माँ सरस्वती की वंदना की गई एवं स्वागत गीत के साथ कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया। महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. चन्द्रशेखर चौबे ने गुरुपूर्णिमा पर्व मनाने के पीछे छिपी हुई भावना पर प्रकाश डालते हुए कहा कि विद्यार्थियों के भविष्य निर्माण का रचयिता उनका गुरु होता है। गुरु सदैव उनका मार्गदर्शन करने के साथ-साथ जीवन में आने वाली बाधाओं हेतु भी पथप्रदर्शक होता है।

इस अवसर पर कन्या महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. एस. के. चटर्जी ने कहा कि यदि हमें अपने शिष्यों से भी कुछ अच्छी बातें सीखने को मिले तो हमें जरूर सीखना चाहिए। गुरु शिष्य संबंध एवं गुरु के महत्त्व का वर्णन महाविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. पी.वेरूलकर, श्रीमती पुष्पा वर्गीस, डॉ. हेमवती ठाकुर, डॉ. ए.के. सिंह एवं प्रो. पी.सी. चौधरी ने भी किया। कार्यक्रम का संचालन करते हुए डॉ. अमर सिंह साहू ने भी गुरुपूर्णिमा के इतिहास एवं महत्ता पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर महाविद्यालय के समस्त स्टॉफ उपस्थित थे।

'भारत में उच्च शिक्षा के परिदृश्य' पर राष्ट्रीय संगोष्ठी दिल्ली में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ द्वारा दीनदयाल उपाध्याय कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में दिनांक 29-30 जुलाई 2017 को 'Higher Education Perspectives in India' विषय पर द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उक्त संगोष्ठी में देश में प्रचलित उच्च शिक्षा के विभिन्न आयामों पर अपेक्षित बदलावों एवं गुणवत्ता वृद्धि के विषय में मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। संगोष्ठी में देश के 22 राज्यों से उच्च शिक्षा क्षेत्र के 400 शिक्षकों ने सक्रिय गवेषणा में भागीदारी करके अपने सुझाव दिये। संगोष्ठी के प्रारम्भ में मंगलाचरण व सरस्वती वंदना के पश्चात् संस्था के प्राचार्य डॉ. एस.के. गर्ग ने स्वागत भाषण किया।

संगोष्ठी का उद्घाटन श्री प्रकाश जावडेकर, मंत्री मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के मुख्य आतिथ्य में हुआ। इस अवसर पर उन्होंने देश भर में महासंघ के शिक्षा और शिक्षक कल्याण के लिये किये जा रहे कार्यों की सराहना करते हुये उच्च शिक्षा क्षेत्र में शिक्षकों की महती भूमिका को रेखांकित किया। उन्होंने घोषणा करते हुये कहा कि शिक्षकों के लिये शीघ्र ही सातवें वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू किया जा रहा है। उन्होंने शिक्षकों के प्रमोशन में ए.पी.आई. की व्यावहारिकता स्थापित करने के लिये उसमें बदलाव करने की बात कही तथा बताया कि कॉलेज शिक्षकों का प्रमोशन अध्यापन व सामुदायिक गतिविधियों पर आधारित होगा जबकि विश्वविद्यालय शिक्षकों की पदोन्नति अध्यापन के साथ-साथ शोध कार्य पर भी निर्भर रहेगी। उन्होंने एडहोक व्यवस्था को समाप्त करने के लिये शीघ्र ही खाली पदों को भरने के लिये भर्ती प्रक्रिया शुरू करने की बात कहते हुये कहा कि इससे एडहोक शिक्षकों को भी नियमित होने का अवसर मिलेगा। संस्थानों की स्वायत्तता की चर्चा करते हुये उन्होंने ग्रेडिंग सिस्टम के आधार पर उत्कृष्ट संस्थानों को स्वायत्तता प्रदान करने व इसके अतिरिक्त अन्य संस्थानों में सरकारी हस्तक्षेप जारी रहने की बात कही। इस अवसर पर विद्यार्थी के फीडबैक को शिक्षकों की पदोन्नति से जोड़ने की योजना बनाने तथा स्वायत्तता के आधार पर संस्थानों के अनुदान में कटौती न करने के भी संकेत दिये। साथ ही संस्थानों में विद्यार्थी का आकर्षण उत्कृष्ट भौतिक संसाधन न होकर गुरु के रूप में शिक्षक के होने के महत्त्व को बताया। सत्र में संगठन का विस्तार से परिचय प्रो. प्रग्नेश शाह (सचिव, उच्च शिक्षा संवर्ग, अ.भा.रा.शै. महासंघ) ने दिया। प्रास्ताविक श्री जे.पी. सिंघल (महामंत्री, अ.भा.रा.शै. महासंघ) ने संगोष्ठी के विभिन्न सत्रों के विषय पर प्रकाश डाला, अध्यक्षता डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल (अध्यक्ष, अ.भा.रा.शै.महासंघ) ने की। डॉ. मनोज सिन्हा-प्राचार्य, आर्यभट्ट महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय एवं सह सचिव उच्च शिक्षा संवर्ग, अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ ने आभार प्रकट किया।

संगोष्ठी के चार सत्रों एवं तीन समानान्तर सत्रों में Accountability of Teachers : Key to Quality Education, Professional Ethics and Accountability of Teachers, NAAC and NIRF Grading System, Autonomy of Institutions of Higher Learning, Issues of Grant Cut for State Funded Institutions, Teachers accountability and Stakeholders Resposibility, Accountability Framework of Teachers विषयों पर हुये जिनमें देश के उत्कृष्ट विद्वान और शिक्षाविदों ने अपने वक्तव्य प्रस्तुत किये तथा सहभागी शिक्षकों ने चर्चा करते हुये अपने सुझाव प्रस्तुत किये। सभी सत्रों में शिक्षा की गुणात्मकता में वृद्धि के विभिन्न आयाम लिये। शिक्षकों में पेशे के लिये शिक्षकों की जवाबदेही सुनिश्चित करने पेशेवर नैतिकता का पालन करने के साथ-साथ अन्य परिस्थितियों को भी जिम्मेदार ठहराया गया तथा उनमें सुधार की आवश्यकता प्रकट की गयी तथा सभी प्रकार से वर्तमान परिस्थितियों में उन्नत शैक्षिक गुणवत्ता के लिये शिक्षकों की जवाबदेही का खाका तैयार करने पर बल दिया गया। जिन विद्वानों के मार्गदर्शन का लाभ मिला उनमें प्रो. अरविंद दीक्षित, कुलपति, बी.आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय आगरा, प्रो. कुलदीप चंद अग्निहोत्री, कुलपति केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश, प्रो. सुषमा यादव व प्रो. इन्दर मोहन कपाही सदस्य विश्विद्यालय अनुदान आयोग, प्रो. बी.एल. शर्मा - कुलपति, पं. दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय राजस्थान, प्रो. एन.के. पाण्डेय- निदेशक केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, प्रो. एस.पी. बंसल-कुलपति इन्दिरा गाँधी विश्वविद्यालय, रेवाड़ी, प्रो. जी.सी. जायसवाल- पूर्व कुलपति आर.एम.एल. अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद (उ.प्र.), प्रो. अशोक शर्मा- कुलपति वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा, प्रो. जे.एल. कॉल - कुलपति एल.एन. बहुगुणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गढ़वाल आदि उल्लेखनीय हैं।

संगोष्ठी के समापन सत्र में प्रो. प्रग्नेश शाह ने संगठन के समक्ष शिक्षक हित के कार्यों का विवरण देते हुये समयबद्ध पदोन्नति, पदोन्नति में शिक्षकों के मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही कार्यों को महत्त्व देने इत्यादि बातों पर प्रकाश डाला। श्री जे.पी. सिंघल ने संगोष्ठी के सत्रों का निष्कर्षात्मक वृत्त प्रस्तुत किया। श्री महेन्द्र कपूर (संगठन मंत्री, अ.भा.रा.शै. महासंघ) ने संगठन के प्रारम्भ एवं उसके उद्देश्यपूर्ण विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालते हुये विभिन्न परिस्थितियों में संपूर्ण देश में उसके विस्तार तथा विचार यात्रा के निरन्तर चलते रहने के विषय को समझाया। सत्र की अध्यक्षता करते हुए डॉ. निर्मला यादव (उपाध्यक्ष, अ.भा.रा.शै.महासंघ) ने वर्तमान में उच्च शिक्षण संस्थानों की वस्तुस्थिति की चर्चा करते हुये अपेक्षित सुधारों पर चर्चा की। डॉ. अनुराग मिश्र (संयोजक, उच्च शिक्षा, दिल्ली, अ.भा.रा.शै.महासंघ) ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

AJKLTF Celebrated 'Guruvandan' in Udhampur

All Jammu Kashmir and Ladakh Teachers Federation under the banner of Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh, Udhampur unit celebrated Guruvandan Karyakaram on July 16, 2017 in which the teachers, students, eminent educationists and citizens participated.

In this programme Sh Mahendra Kapoor Akhil Bharatiya Sangathan Mantri Akhil Bharatiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh was the chief spokesperson and Sh. J R Bhardwaj Chief Education Officer Udhampur was the Chief Guest during the occasion.

Shaikshik Mahasangh celebrates Guruvandan programme during 'Gurupurnima' in all over the country every year. The same programme was celebrated by the Udhampur unit of the Federation.

Sh. Mahendra Kapoor Rashtriya Sangathan Mantri during his address as a chief Spokesperson said that the main purpose to celebrate Guruvandan Karyakaram is to uphold and preserve the thousands of years old Indian Guru values, culture and tradition,which developed Ancient India as a model society .Since time immemorial, the Gurus/Teachers/Acharyas always kept the nation ahead by giving effective education based on Indian tradition, culture and values due to the hard and tough work of our Gurus, India produced several Rishis and great personalities. Keeping in mind the values and great work of Maharishi Ved Vyas, we want to preserve this system.

Sh J R Bhardwaj Chief Education Officer Udhampur as a Chief Guest said that we are the respectable and responsible persons of society, we should work with full dedication, honestly, sinceritly, zeal and enthuasism . This is the main motive behind the Gurubandan programme.He talked about different types of Gurus, Spiritual Guru, Intellectual Guru etc.

Dev Raj Thakur State President welcomed all the guests and participants.

Bangiya Shikshak O Shikshakarmi Sangha Karyakarta Abhyasvarga

To inculcate the eternal values developed through spiritual and moral education and to make nationalistic ideal teachers Bangiya Shikshak O Shikshakarmi Sangha organized a two-day 'Karyakarta Abhyasvarga' of Gourbanga Vibhag (Uttar Dinajpur, Dakshin Dinajpur and Malda District of West Bengal) on June 25 and June 26, 2017 at Thangapara High School in the district of Dakshin Dinajpur, WestBengal. More than 80 teachers from the different part of Gourbanga attended the 'Abhyasvarga'. Being attended the Abhyasvarga, State President Abani Bhushan Mandal, State General Secretary Arup Sengupta and Sanrakshak Aloke Kr. Das led the way to the teachers. The varga was also adorned with the august presence of Shree Satyanarayan Majumdar, distinguished educationist, Swami Jyotirmayanandiji Maharaj of Kunor Bharat Sevashram Sangha, Dr. Bapi Mishra, Assistant Professor of University of Gourbanga and Shree Pradip Adhikari, Uttarbanga Pranta Karyabaha of RSS. In his inaugural speech Shree Satyanarayan Majumdar explained the difference between 'Conference' and 'Abhyasvarga' and upheld the importance of Abhyasvarga. In this context he referred that "in Abhyasvarga we generally cogitate ourselves and churn our ideals".

देशीय अध्यापक परिषद, केरल का कोल्लम में धरना

राज्य में सार्वजनिक शिक्षा संरक्षण यज्ञ सुयोग्य ढँग से चलाने के लिए शिक्षकों की असुरक्षा दूर करने के लिए सरकार तैयार होनी चाहिए - कोल्लम जिला शिक्षा कार्यालय के सामने जिला समिति द्वारा आयोजित धरने का सम्बोधित करते हुए देशीय अध्यापक परिषद के राज्य सचिव पी.एस. गोप कुमार ने कहा। अपूर्ण और अवैज्ञानिक ढँग के पद कार्यान्वयन के कारण हजारों शिक्षकों के पद समाप्त होने से विद्यालय से बाहर जाने की स्थिति आ गयी। उच्च माध्यमिक शिक्षा और वोकेशनल माध्यमिक शिक्षा क्षेत्र में भी लाखों सीट खाली रहने के कारण उस क्षेत्र के शिक्षक भी चिंता में हैं। N.S.Q.F शुरू करने की प्रारंभिक कार्य भी अभी तक नही किया है।statutary pension फिर लाना। शिक्षा क्षेत्र के राजनीतिक हस्तक्षेप का अंत करना, महँगाई को रोकना, रोजगार कर हटाना आदि माँग लेकर जिला समिति ने जिला शिक्षा कार्यालय के सामने धरना की।

जिलाध्यक्ष जय कृष्णन अध्यक्ष थे। राज्य सचिव पी.वी. श्री कले शन ने मुख्य भाषण किया। क्षेत्रीय सचिव श्री रंगम शंभु, NGO संघ के राज्य सचिव टी एन रमेश, फेटो जिलाध्यक्ष के राधाकृष्ण पिल्ला, सचिव एस के दिलीप , पेंशन संघ के जिलाध्यक्ष डॉ. वी. शशि धरन पिल्ला, सचिव के ओमन कुट्टन पिल्ला, देशीय अध्यापक परिषद के राज्य कार्यकारिणी के अनेक सदस्य उपस्थित रहे। जिला उपाध्यक्ष आर शिवन पिल्ले ने आभार प्रकट किया।

लखनऊ विश्वविद्यालय में गुरुवन्दन कार्यक्रम सम्पन्न

शैक्षिक जगत की बीमारियों का शोधन करें शिक्षक। शिक्षक-आचार्यों के समर्पण के कारण ही सभी का ज्ञानवर्धन होता है। अपने राष्ट्र और समाज जीवन के अंत:करण के अंधकार को दूर करने वाला पुनीत पर्व है गुरुपूर्णिमा। हम श्रद्धा के उपासक हैं, अन्धविश्वास के नहीं। हम ज्ञान के उपासक हैं, अज्ञान के नहीं। जीवन के हर क्षेत्र में विशुद्ध रूप में ज्ञान की प्रतिष्ठापना करना ही हमारी संस्कृति की विशेषता रही है। सृष्टि के साथ समन्वय करते हुए जीना ही मानव का कर्त्तव्य है।

उक्त बातें 20 जुलाई, 2017 को नेशनल लोक प्रशासन विभाग डी.पी.ए. सभागार लखनऊ विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ उत्तर प्रदेश लखनऊ विश्वविद्यालय एवं सम्बद्ध महाविद्यालय इकाई द्वारा आयोजित ''गुरु वंदन कार्यक्रम'' में मुख्य वक्ता अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री ओमपाल सिंह ने कही।

मुख्य अतिथि राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के प्रदेश अध्यक्ष प्रो. अनिल कुमार सिंह ने कहा की हमें अपनी प्राचीन ज्ञान की विरासत व विचारों को अपना पाथेय बना राष्ट्र के पुनर्निर्माण के कार्य में जुटना होगा तभी हम विश्वगुरु भारत के प्रभाव को पुनर्स्थापित कर सकेंगे। त्याग, समर्पण, समन्वय की संस्कृति ही शांतियुक्त, सुखमय, आनन्दमय जीवन का आधार है। भारत के गौरवशाली इतिहास को जानने के लिए यह गुरु वन्दन कार्यक्रम का आयोजन महत्त्वपूर्ण हो जाता है जिससे सशक्त-समृद्धि भारत के लिए लोक जागरण हो सके।

विशिष्ट अतिथि राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ उत्तर प्रदेश के प्राथमिक संवर्ग के संगठन मंत्री श्रीकृष्ण त्रिवेदी ने कहा की पीढ़ियों को तराशने का कार्य सदैव से शिक्षक ही करता आया है वह जैसा चाहेगा समाज की रचना वैसा ही बनेगी। गुरु शिष्य को अंत: शक्ति से ही परिचित नहीं कराता, बल्कि उसे जाग्रत एवं विकसित करने के हर संभव उपाय भी बताता है।

अध्यक्षता करते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय समाज कार्य विभाग के अध्यक्ष प्रो.डी.के. सिंह ने कहा की आत्मबल को जगाने का काम गुरु ही करता है। गुरु अपने आत्मबल द्वारा शिष्य में ऐसी प्रेरणाएँ भरता है, जिससे कि वह अच्छे मार्ग पर चल सके। विश्वविद्यालय का प्रयास ऐसे सुयोग्य नागरिकों का निर्माण करना है जो देश-समाज के लिए अपनी प्रतिभा-क्षमता समर्पित कर भारतीय ध्वज पताका दुनिया में फहरायें।

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ लखनऊ विश्वविद्यालय एवं सम्बद्ध महाविद्यालय इकाई की अध्यक्ष डॉ. किरण लता डंगवाल ने सभी से महासंघ से जुड़ने की अपील करते हुए बताया की महासंघ राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ स्वाध्याय-स्वावलम्बन-सम्मान के संकल्पना के आधार पर ऐसी रचना का निर्माण कर रहा है जिससे राष्ट्र के हित में शिक्षा, शिक्षा के हित में शिक्षक और शिक्षक के हित में समाज खड़ा हो।

खरगोन में गुरुवन्दन कार्यक्रम

गुरु अपनी पूर्ण क्षमता, योग्यता को अपने शिष्य में उतारने का सतत् प्रयास करता है। शिष्य को पूरे भाव से गुरु आज्ञा में आरुणी, स्वामी विवेकानन्द जैसा समर्पण दिखाना चाहिए। हमारी गुरु शिष्य परम्परा ने भारत को जगतगुरु का स्थान दिलाया है। उक्त विचार म. प्र. शिक्षक संघ खरगोन के गुरु वन्दन कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के रूप में संगठन के मालवा प्रान्त सह संगठन मंत्री हीरालाल तिरोले ने रखे।

कार्यक्रम सरस्वती विद्या मन्दिर खरगोन में 17 जुलाई 2017 को सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम को राजेन्द्र बड़ोले प्रधानाचार्य सरस्वती शिशु मन्दिर तिलक पथ खरगोन एवं लछीराम इंगले प्रांताध्यक्ष म.प्र. शिक्षक संघ ने भी सम्बोधित किया। अतिथियों द्वारा महर्षि वेदव्यास, माँ सरस्वती, भारत माता के चित्र का पूजन अर्चन कर कार्यक्रम शुरू हुआ। अतिथि परिचय संघ के जिला सचिव रमेशचन्द्र पाटीदार ने दिया। सञ्चालन नरेंद्र चौहान ने किया। आभार बी.एन. सोनी ने माना ।

जबलपुर में गुरुवंदन कार्यक्रम हुआ आयोजित

म.प्र. शिक्षक संघ व अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 13 जुलाई, 2017 को गुरुवंदन कार्यक्रम राज्य विज्ञान शिक्षा संस्थान, जबलपुर में सम्पन्न हुआ। गुरुवंदन कार्यक्रम में शिक्षकों एवं अध्यापकों को सम्बोधित करते हुए रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. कपिलदेव मिश्र ने गुरु के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुये कहा कि शिक्षक का अर्थ है कि शिक्षक जिसमें शिष्टाचार हो, अच्छा आचरण हो, क्षमाशीलता एवं कर्तव्यनिष्ठा हो, वह शिक्षक है। वर्तमान में शिक्षकों को आत्मावलोकन करना चाहिए। कुलपति डॉ. कपिल देव मिश्र ने राज्य विज्ञान शिक्षा संस्था में म.प्र. शिक्षक संघ के पदाधिकारियों, शिक्षकों एवं अध्यापकों तथा प्रशिक्षणार्थियों को आदर्श गुरु, शिष्य परम्परा को आचार्य चाणक्य के गुरुत्व के कारण चन्द्रगुप्त मौर्य को शिक्षा-दीक्षा एवं ज्ञान देकर मगध राज्य का राजा बनवाया। आज हमारे देश को चाणक्य जैसे गुरुओं की आवश्यकता है, जिससे भारत वर्ष को पुन: विश्वगुरु का स्थान प्राप्त हो सके।

कार्यक्रम का शुभारम्भ माँ सरस्वती का पूजन, माल्यार्पण एवं दीप प्रज्वलित कर डॉ. कपिलदेव मिश्र, श्री एन.के. चौकसे डीईओ ने किया। प्रारंभ में किशनलाल नाकाड़ा क्षेत्र प्रमुख म.प्र. एवं छत्तीसगढ़ द्वारा शैक्षिक महासंघ के वर्ष में प्रमुख चार कार्यक्रम स्थायी हैं- कर्तव्य बोध दिवस, वर्ष प्रतिपदा आयोजन, गुरुवंदन कार्यक्रम, शाश्वत जीवन मूल्य पर व्याख्यान/ कार्यशाला आयोजन करता है। साथ में अखिल भारतीय शिक्षा भूषण शिक्षक सम्मान कार्यक्रम आयोजित होते हैं, विस्तार से कार्यक्रम की जानकारी दी।

जिला शिक्षा अधिकारी एन.के. चौकसे ने अपने गरिमामय उद्बोधन द्वारा शिक्षकों को अपने कर्तव्यों का स्मरण करवाकर, स्वाध्यायी बनकर, छात्र को ज्ञान बाँटकर, राष्ट्र निर्माण में भूमिका रेखांकित करें।

शिमला में गुरुवन्दन कार्यकम का आयोजन

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ (सम्बद्ध अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) की जिला शिमला इकाई द्वारा 31 अगस्त, 2017 को 'गुरु वन्दन' कार्यक्रम का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता राष्ट्रीय अंकेक्षक, अखिल भारतीय शैक्षिक महासंघ एवं प्रान्त संगठन मंत्री पवन मिश्रा द्वारा की गई। समारोह का शुभारंभ दीप प्रज्वलन और माँ सरस्वती वन्दना से किया गया। हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ 'इकाई शिमला' के प्रधान वीर भगत ने समारोह के अध्यक्ष, मुख्य अतिथि और अन्य मौजूद सेवानिवृत शिक्षक, अभिभावक जन, मेधावी छात्र और अन्य सभी का स्वागत किया और गुरु पूर्णिमा के अवसर पर शिक्षकों को याद करने की भारतीय परम्परा के बारे में अपने विचार रखे। पवन मिश्रा ने कहा कि संगठन द्वारा 'कर्त्तव्य बोद्ध पखवाड़ा', 'शाश्वत जीवन मूल्य' और 'गुरुवन्दन' के कार्यक्रमों का वर्ष भर पूरे प्रदेश में सफल आयोजन किया जाता है। उन्होंने कहा, 'भारतीय संस्कृति में गुरुओं का स्थान सर्वोपरि माना गया है।' कार्यक्रम के मुख्य वक्ता, दार्शनिक एवं मुख्य अतिथि प्रान्त सह-संघसंचालक प्रोफेसर वीर सिंह रांगडा ने कहा कि हमारी संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है जिसका इतिहास लगभग 2 अरब वर्ष पुराना है। इस संस्कृति में गुरु को ईश्वर तुल्य माना गया है। गुरु कृपा और उनके द्वारा दी जाने वाली शिक्षा और संस्कारों में ही हमारे समाज की भलाई और कल्याण निहित है। उन्होंने जोर देकर बताया, 'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जीवन के चार स्तम्भ हैं। चार आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास जीवन के आधार हैं। इन सभी का ज्ञान गुरु द्वारा ही प्रदान किया जाता है'। इसी श्रृंखला में जिला सिरमौर इकाई द्वारा भी गुरु वन्दन कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

हिमाचल प्रदेश की राज्य कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ (सम्बद्ध अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) की राज्य कार्यकारिणी की बैठक 30 जुलाई 2017 को धुन्दन में सम्पन्न हुई। इसमें राष्ट्रीय आन्तरिक अंकेक्षक एवं प्रान्त संगठन मंत्री पवन मिश्रा ने बतौर अध्यक्ष सहभाग किया। बैठक का शुभारम्भ सरस्वती वन्दना से किया गया। पवन मिश्रा ने अपने उदबोधन में संगठन के विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी दी जिनमें 31 जुलाई को जिला शिमला में, 6 अगस्त को जिला बिलासपुर के घुमारवीं में, 12 अगस्त को जिला मण्डी के करसोग में और इसी प्रकार अन्य जिलों में भी गुरुवन्दन कार्यक्रम तय किए गए हैं। अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ द्वारा चलाए जा रहे 'शाश्वत जीवन मूल्य' के कार्यक्रम भी प्रदेश के विभिन्न जिलों में तय किए गए हैं। इसके अलावा 2-3 सितम्बर को जिला बिलासपुर के घुमारवीं में राज्य कार्यकारिणी की बैठक और 24-25 दिसम्बर को जिला कुल्लू में कार्यकर्त्ता अभ्यास वर्ग होना निश्चित है। उन्होंने बताया, 'कार्यक्रमों से कार्यकर्त्ता मिलते हैं और कार्यकर्त्ता से संगठन का विस्तार। संगठन का प्रचार व प्रसार करने के लिए कार्यक्रम ही सबसे उपयुक्त माध्यम है। इनके द्वारा ही समाज को शिक्षा और स्कूलों से जोड़ा जा सकता है।

बैठक के अन्त में प्रान्त अध्यक्ष रजनीश चौधरी अपने उद्बोधन में कहा कि कार्यकर्ता स्कूलों से ही शिक्षकों व शिक्षा की विभिन्न समस्याऐं को लाएँ जिन पर आगामी राज्य कार्यकारिणी की बैठक में विचार-विमर्श हो और नया माँग पत्र तैयार किया जाए एवं उच्च अधिकारियों और सरकार के समक्ष उन बिन्दुओं पर खुल कर चर्चा हो जिससे समस्याएँ का उपयुक्त हल खोजा जाए। उन्होंने सभी कार्यकर्ताओं एवं शिक्षक बन्धुओं से 'विद्यालयों में गुणवत्ता शिक्षण' विषय पर होने वाली संगोष्ठियों में भाग लेने का अनुरोध किया। उन्होंने जोर देकर कहा, 'शिक्षा में गुणवत्तापूर्ण कक्षा कक्ष से शुरू होगी जिसके लिए ही संगठन इस तरह की संगोष्ठियों का आयोजन कर रहा है।'

अ.भा.रा. शैक्षिक महासंघ ने मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर से विस्तृत वार्ता की

माननीय मंत्री महोदय ने सातवें वेतन आयोग की सिफारिशों को उच्च शिक्षा के शिक्षकों हेतु इस महीने के अंत तक लागू करने के लिए आश्वस्त किया। अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ का एक पाँच सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर जी एवं मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री (प्रभारी उच्च शिक्षा) डॉ. महेन्द्र नाथ पांडे जी से संसद भवन में ही भेंट की एवं शिक्षकों से संबंधित अनेक समस्याओं पर विस्तार से चर्चा की। विशेष रूप से सातवें वेतन आयोग के सिफारिशों को सम्पूर्ण देश में समान रूप से लागू करने पर गहन विचार विमर्श हुआ। माननीय मंत्री महोदय ने इस महीने के अंत तक इन सिफारिशों को लागू कर देने के लिये आश्वस्त किया।

इनके अलावा छठे वेतनमान की विसंगतियों को दूर करने, एक जनवरी 2004 से पूर्व की पेंशन योजना को बहाल करने, सेवानिवृत्ति आयु समान रूप से 65 वर्ष करने, शैक्षिक पदों पर नियमित एवं स्थायी नियुक्ति सुनिश्चित करने, महाविद्यालय शिक्षकों का नामकरण एक समान करने, शिक्षकों को सीएएस का लाभ सुनिश्चित करने, प्राचार्यों का कार्यकाल सेवानिवृत्ति आयु प्राप्त करने तक रखने, कार्यरत शिक्षकों को पीएचडी कोर्सवर्क से मुक्त रखने एवं शिक्षा के बाजारीकरण पर नियंत्रण सुनिश्चित करने आदि विषयों पर माननीय मंत्री महोदय का सकारात्मक रूख रहा और अनेक विषयों पर अपनी सैद्धांतिक सहमति जताई। मा. मंत्री महोदय ने प्रतिनिधिमंडल को आश्वस्त किया कि सभी शिक्षकों की विभिन्न चिंताओं को ध्यान रखते हुए ही निर्णय लिए जाएँगे। इस प्रतिनिधि मंडल में श्री महेन्द्र कपूर (रा. संगठन मंत्री), श्री जे.पी. सिंघल (महामंत्री), श्री महेन्द्र कुमार (प्रभारी उच्च शिक्षा), डॉ. मनोज सिन्हा (संयुक्त मंत्री) एवं अनुराग मिश्रा (दिल्ली प्रदेश) शामिल हुए।